* ॐ श्रीपरमात्मने नमः *

मूल्य ₹ २००

गीताप्रेस, गोरखपुर

दुर्गति-नाशिनि दुर्गा जय जय, काल-विनाशिनि काली जय जय।
उमा-रमा-ब्रह्माणी जय जय, राधा-सीता-रुक्मिणि जय जय॥
साम्ब सदाशिव, साम्ब सदाशिव, साम्ब सदाशिव, जय शंकर।
हर हर शंकर दुखहर सुखकर अघ-तम-हर हर हर शंकर॥
हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे। हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे॥
जय जय दुर्गा, जय मा तारा। जय गणेश जय शुभ-आगारा॥
जयति शिवाशिव जानकिराम। गौरीशंकर सीताराम॥
जय रघुनन्दन जय सियाराम। व्रज-गोपी-प्रिय राधेश्याम॥
रघुपति राघव राजाराम। पतितपावन सीताराम॥

(संस्करण २,१५,०००)

'गंगा ही परम गति हैं'

गङ्गैव परमो बन्धुर्गङ्गैव परमं सुखम्। गङ्गैव परमं वित्तं गङ्गैव परमा गतिः॥
गङ्गैव परमा मुक्तिर्गङ्गा सारतरेति ये। विभावयन्ति तेषां तु न दूरस्था कदाचन॥
गङ्गातीरं परित्यज्य योऽन्यत्र निवसेन्नरः। करस्थां संत्यजन्मुक्तिः सोऽन्वेषी नरकस्य तु॥
धन्यः स देशो यत्रास्ति गङ्गा त्रैलोक्यपावनी। गङ्गाहीनस्तु यो देशो न प्रदेशः स भण्यते॥
गङ्गातीरे वरं भिक्षा वरं प्राणवियोजनम्। अन्यत्र पृथिवीपत्वं न नरः प्राथयेत्क्वचित्॥
यस्मिन्देशे वसेदेको गङ्गाभक्तिपरो नरः। सोऽपि पुण्यतमो देशस्तत्र दानं महाफलम्॥
श्राद्धं च तर्पणं तत्र पितॄणां तृप्तिकारकम्। अनन्तफलदं ज्ञेयं जपहोमादिकं तथा॥
गङ्गा नाम परं सौख्यं गङ्गा नाम परं तपः। गङ्गेति संस्मरन्नित्यं स्य नास्ति यमाद्भयम्॥

'गङ्गा ही परम बन्धु हैं, गङ्गा ही परम सुख हैं, गङ्गा ही परम धन हैं, गङ्गा ही परम गति हैं, गङ्गा ही परम मुक्ति हैं और गङ्गा ही परम तत्त्व हैं' जो लोग ऐसी भावना करते हैं, गङ्गा उनसे कभी भी दूर नहीं रहती हैं। जो मनुष्य गङ्गाका तट छोड़कर अन्यत्र निवास करता है, वह मानो अपने हाथमें स्थित मुक्तिका त्याग करके नरककी खोज करता है। वह देश धन्य है, जहाँ तीनों लोकोंको पवित्र कर देनेवाली गङ्गा हैं। जो देश गङ्गासे रहित है, उसे देश नहीं कहा जा सकता। गङ्गाके तटपर रहते हुए भिक्षा श्रेष्ठ है तथा वहाँ प्राणान्त हो जाना भी श्रेयस्कर है। मनुष्यको दूसरे स्थानपर राजत्वके लिये कभी भी प्रार्थना नहीं करनी चाहिये। गङ्गाकी भक्तिमें तत्पर रहनेवाला एक भी मनुष्य जिस देशमें रहता है, वह देश भी परम पुण्यशाली है और वहाँपर दिया गया दान महान् फल देनेवाला होता है। वहाँपर किया गया श्राद्ध तथा तर्पण पितरोंको तृप्त करनेवाला होता है। साथ ही वहाँपर किये गये जप-होम आदिको अनन्त फल देनेवाला समझना चाहिये। गङ्गाका नाम-स्मरण परम आनन्द तथा गङ्गाका नामस्मरण परम तप है। जो मनुष्य गङ्गा—इस नामका नित्य स्मरण करता है, उसे यमराजका भय नहीं रहता। [**श्रीमहाभागवतपुराण**]

* कृपया नियम अन्तिम पृष्ठपर देखें।

वार्षिक शुल्क*
अजिल्द ₹ २००
सजिल्द ₹ २२०

जय पावक रवि चन्द्र जयति जय। सत्-चित्-आनँद भूमा जय जय॥
जय जय विश्वरूप हरि जय। जय हर अखिलात्मन् जय जय॥
जय विराट् जय जगत्पते। गौरीपति जय रमापते॥

पंचवर्षीय शुल्क*
अजिल्द ₹१०००
सजिल्द ₹११००

विदेशमें Air Mail सजिल्द शुल्क — वार्षिक US$ 45 (Rs.2700), पंचवर्षीय US$ 225 (Rs.13500) — Us Cheque Collection Charges 6$ Extra

संस्थापक—**ब्रह्मलीन परम श्रद्धेय श्रीजयदयालजी गोयन्दका**
आदिसम्पादक—**नित्यलीलालीन भाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार**
सम्पादक—**राधेश्याम खेमका,** सहसम्पादक—**डॉ० प्रेमप्रकाश लक्कड़**
केशोराम अग्रवालद्वारा गोबिन्दभवन-कार्यालय के लिये गीताप्रेस, गोरखपुर से मुद्रित तथा प्रकाशित

website : **www.gitapress.org** | e-mail : **kalyan@gitapress.org** | ✆ **(0551) 2334721**

सदस्यता-शुल्क—**व्यवस्थापक—'कल्याण-कार्यालय', पो० गीताप्रेस—२७३००५, गोरखपुर को भेजें।**
Online सदस्यता-शुल्क भुगतानहेतु gitapress.org पर **Online Magazine Subscription** option को click करें।
अब 'कल्याण' के मासिक अङ्क kalyan-gitapress.org पर निःशुल्क पढ़ें।

श्रीहरिः

‘गङ्गा-अङ्क’ की विषय-सूची

विषय पृष्ठ-संख्या

विषय	पृष्ठ-संख्या

गंगातत्त्व-दर्शन

[क] गंगा-माहात्म्य

[ख] गंगाके पौराणिक आख्यान

विषय	पृष्ठ-संख्या

गंगाका भूगोल

गोमुखसे गंगासागरतक गंगाकी यात्रा

गंगाप्रदूषण—कारण और निवारण

विषय	पृष्ठ-संख्या

सत्साहित्यमें गंगा

लोकसंस्कृतिमें गंगा-दर्शन

विषय	पृष्ठ-संख्या

विषय	पृष्ठ-संख्या	विषय	पृष्ठ-संख्या

चित्र-सूची

(रंगीन चित्र)

(सादे चित्र)

श्रुतिसरिता

इमं मे गङ्गे यमुने सरस्वति
शुतुद्रि स्तोमं सचता परुष्ण्या।
असिक्न्या मरुद्वृधे वितस्तया-
र्जीकीये शृणुह्या सुषोमया॥

हे गंगे! हे यमुने! हे सरस्वति! हे शुतुद्रि! हे परुष्णि! असिक्निीसहित हे मरुद्वृधे! वितस्ता तथा सुषोमानदीसे समृद्ध हे आर्जीकीये! आप सभी सर्वदा स्तवनीय हैं। हे नदीस्वरूपा देवियो! मेरे द्वारा की जानेवाली स्तुतियोंका कृपया आप श्रवण करें। [**ऋग्वेद**]

या प्रवतो निवत उद्वत उदन्वतीरनुदकाश्च याः। ता अस्मभ्यं पयसा पिन्वमानाः शिवा देवीरशिपदा भवन्तु सर्वा नद्यो अशिमिदा भवन्तु॥

जो नदियाँ दुर्गम भूभागोंमें बहा करती हैं, जो भूमिके अन्तस्तलमें संचरण करती हैं, जिन नदियोंका प्रवाह पार्वत्य-प्रदेशोंके उच्चतम भूभागोंको आप्लावित करता है, जो नदियाँ नित्यसलिला हैं और जो अन्तः-सलिला प्रतीत होती हैं, वे दिव्यकान्तिमयी तथा अपने पीयूषोपम जलसे जगत्‌को आप्लावित करनेवाली सरिताएँ शिपद आदि विभिन्न रोगोंको दूर करती हुई सर्वदा हमें कल्याण तथा संरक्षण प्रदान करें। [**ऋग्वेद**]

सितासिते सरिते यत्र सङ्गथे
तत्राप्लुतासो दिवमुत्पतन्ति।
ये वै तन्वं विसृजन्ति धीरा-
स्ते जनासो अमृतत्वं भजन्ते॥

जिस तीर्थमें गंगा और यमुना—इन दोनों नदियोंका संगम हुआ है, उस तीर्थमें स्नान करनेवाले प्राणी देवलोककी प्राप्ति करते हैं और जो वहाँ शरीरका त्याग करते हैं, वे धीरपुरुष अमृतत्व अर्थात् मोक्षको प्राप्त करते हैं। [**ऋक्परिशिष्ट**]

हिमवतः प्र स्त्रवन्ति सिन्धौ समह सङ्गमः।
आपो ह मह्यं तद् देवीर्ददन् हृद्द्योतभेषजम्॥

हिममण्डित पर्वतशिखरोंसे द्रवित होती हुई अविरल शीतल जलधाराएँ सागरमें विलीन हो रही हैं। वे सतत गतिशील तथा शैत्यवाहिनी जलधाराएँ उपासकोंके अन्तस्तापका परिशमन करनेवाली ओषधियाँ प्रदान करें। [**अथर्ववेद**]

सिन्धुपत्नीः सिन्धुराज्ञीः सर्वा या नद्य स्थन।
दत्त नस्तस्य भेषजं तेना वो भुनजामहै॥

हे जलाधिदेवियो! आप सभी जलाधिपति महासिन्धुकी कान्ताएँ हैं, आप सन्तापतप्त लोकमानसके तापोपशमनार्थ निरन्तर गतिशील रहती हैं, आधि-व्याधिसे सन्तप्त हम उपासकोंको आप करुणावारिरूप ओषधियोंसे नैरुज्य प्रदान करें, जिससे आपके प्रीतिपात्र हम उपासक अन्न-पानादिका यथेष्ट उपभोग करनेमें समर्थ हो सकें।
[**अथर्ववेद**]

हिरण्यवर्णाः शुचयः पावका
यासु जातः सविता यास्वग्निः।
या अग्निं गर्भं दधिरे सुवर्णा-
स्ता न आपः शं स्योना भवन्तु॥

मंगलमय, आह्लादक तथा स्वर्णिम कान्तिवाला यह जल स्वभावतः शुद्ध होनेसे स्नान-आचमन-पानादिके माध्यमसे उपासकोंको पवित्रता प्रदान करनेवाला है। यह जल सूर्य तथा अग्नि-जैसे विशोधकोंका भी परमकारण होनेसे पावनतम (पवित्रतम) है। ऐसा वह जगत्पावन, अग्निगर्भ वारि हम उपासकोंकी समस्त व्याधियोंका शमनकर परमशान्ति तथा सौख्य प्रदान करे। [**अथर्ववेद**]

श्रीगङ्गाजीके विविध ध्यान-स्वरूप

मकरवाहिनी श्रीगंगा

सितमकरनिषण्णां शुभ्रवर्णां त्रिनेत्रां
करधृतकलशोद्यत्सोत्पलामत्यभीष्टाम् ।
विधिहरिहररूपां सेन्दुकोटीरचूडां
कलितसितदुकूलां जाह्नवीं तां नमामि॥

श्वेत मकरपर विराजित, शुभ्रवर्णवाली, तीन नेत्रोंवाली, दो हाथोंमें भरे हुए कलश तथा दो हाथोंमें सुन्दर कमल धारण किये हुए, भक्तोंके लिये परम इष्ट; ब्रह्मा, विष्णु तथा महेश तीनोंका रूप अर्थात् तीनोंके कार्य करनेवाली, मस्तकपर सुशोभित चन्द्रजटित मुकुटवाली तथा सुन्दर श्वेत वस्त्रोंसे विभूषित माँ गंगाको मैं प्रणाम करता हूँ।

देवनदी श्रीगंगा

ब्रह्माण्डं खण्डयन्ती हरशिरसि जटावल्लिमुल्लासयन्ती
स्वर्लोकादापतन्ती कनकगिरिगुहागण्डशैलात्स्खलन्ती।
क्षोणीपृष्ठे लुठन्ती दुरितचयचमूर्निर्भरं भर्त्सयन्ती
पाथोधिं पूरयन्ती सुरनगरसरित्पावनी नः पुनातु॥

ब्रह्माण्डका भेदनकर निकलनेवाली, महादेवजीकी जटा-लताको उल्लसित करनेवाली, स्वर्गलोकसे गिरनेवाली, सुमेरुकी गुफा और पर्वतमालासे अवतरित होनेवाली, पृथ्वीपर विहार करनेवाली, पापसमूहकी सेनाको कड़ी फटकार देनेवाली, समुद्रको भरनेवाली तथा देवपुरीकी पवित्र नदी गंगा हमें पवित्र करे।

[गंगाष्टक]

चतुर्भुजादेवी गंगा

चतुर्भुजां त्रिनेत्रां च सर्वावयवभूषिताम्।
रत्नकुम्भां सिताम्भोजां वरदामभयप्रदाम्॥
श्वेतवस्त्रपरीधानां मुक्तामणिविभूषिताम्।
सदा ध्यायेत् सुरूपां तां चन्द्रायुतसमप्रभाम्॥

श्रीगंगाजीकी चार भुजाएँ हैं। उनके तीन नेत्र हैं। उनके सम्पूर्ण अंग सुन्दर हैं तथा आभूषणोंसे सुशोभित हो रहे हैं। वे एक हाथमें [जलपूरित] रत्नघट, दूसरे हाथमें श्वेतपद्म, तीसरे हाथमें वरद मुद्रा एवं चौथेमें अभय मुद्रा धारण किये हैं। वे उज्ज्वल वस्त्र धारण करती हैं और मणि तथा मोतियोंसे सुशोभित हैं। उनमें हजारों चन्द्रमाओंकी ज्योति छिटक रही है। [भक्तको] सदा उनके इस प्रकारके सुन्दर रूपका ध्यान करना चाहिये। **[भविष्यपुराण]**

धर्मद्रवरूपा भगवती गंगा

साक्षाद्धर्मद्रवौघं मुररिपुचरणाम्भोजपीयूषसारं
दुःखस्याब्धेस्तरित्रं सुरदनुजनुतं स्वर्गसोपानमार्गम्।
सर्वांहोहारि वारि प्रवरगुणगणं भासि या संवहन्ती
तस्यै भागीरथि श्रीमति मुदितमना देवि कुर्वे नमस्ते॥

श्रीमती भागीरथी देवी! जो जलरूपमें परिणत साक्षात् धर्मकी राशि है, भगवान् विष्णुके चरणारविन्दोंसे प्रकट हुई सुधाका सार है, दुःखरूपी समुद्रसे पार होनेके लिये जहाज है तथा स्वर्गलोकमें जानेके लिये सीढ़ी है, जिसे देवता और दानव भी प्रणाम करते हैं, जो समस्त पापोंका संहार करनेवाला, उत्तम गुणसमूहसे युक्त और शोभासम्पन्न है, ऐसे जलको आप धारण करती हैं। मैं प्रसन्नचित्त होकर आपको नमस्कार करता हूँ। **[संकलित]**

भगवती भागीरथी

उत्फुल्लामलपुण्डरीकरुचिरा कृष्णेशविध्यात्मिका
कुम्भेष्टाभयतोयजानि दधती श्वेताम्बरालङ्कृता।
हृष्टास्या शशिशेखराखिलनदीशोणादिभिः सेविता
ध्येया पापविनाशिनी मकरगा भागीरथी साधकैः॥

जिनकी देहकान्ति खिले हुए स्वच्छ कमलके समान मनोहारिणी है, जो ब्रह्म-विष्णु-रुद्रस्वरूपिणी हैं, जिन्होंने दाहिने भुजयुगलमें वरमुद्रा तथा कमल और वाम भुजयुगलमें सुधाकलश तथा अभय मुद्राको धारण किया है, जो श्वेत वस्त्रोंसे अलंकृत हैं, जिनके मस्तकपर चन्द्रमा शोभायमान है तथा समस्त नदियाँ और शोण आदि महानद जिनकी सेवा कर रहे हैं, ऐसी प्रसन्न मुखवाली तथा मकरपर आरूढ़, पापविनाशिनी भगवती भागीरथीका साधकोंको ध्यान करना चाहिये।

[मन्त्रमहोदधि]

श्रीवाल्मीकिविरचित गङ्गाष्टक

मातः शैलसुतासपत्नि वसुधाशृङ्गारहारावलि
स्वर्गारोहणवैजयन्ति भवतीं भागीरथि प्रार्थये।
त्वत्तीरे वसतस्त्वदम्बु पिबतस्त्वद्वीचिषु प्रेङ्खत-
स्त्वन्नाम स्मरतस्त्वदर्पितदृशः स्यान्मे शरीरव्ययः॥ १॥
त्वत्तीरे तरुकोटरान्तरगतो गङ्गे विहङ्गो वरं
त्वन्नीरे नरकान्तकारिणि वरं मत्स्योऽथवा कच्छपः।
नैवान्यत्र मदान्धसिन्धुरघटासङ्घट्टघण्टारण-
त्कारत्रस्तसमस्तवैरिवनितालब्धस्तुतिर्भूपतिः॥ २॥
उक्षा पक्षी तुरग उरगः कोऽपि वा वारणो वा
वारीणः स्यां जननमरणक्लेशदुःखासहिष्णुः।
न त्वन्यत्र प्रविरलरणत्कङ्कणक्वाणमिश्रं
वारस्त्रीभिश्चमरमरुता वीजितो भूमिपालः॥ ३॥
काकैर्निष्कुषितं श्वभिः कवलितं गोमायुभिर्लुण्ठितं
स्त्रोतोभिश्चलितं तटाम्बुलुलितं वीचीभिरान्दोलितम्।
दिव्यस्त्रीकरचारुचामरमरुत्संवीज्यमानः कदा
द्रक्ष्येऽहं परमेश्वरि त्रिपथगे भागीरथि स्वं वपुः॥ ४॥

पृथ्वीकी शृङ्गारमाला, पार्वतीजीकी सपत्नी और स्वर्गारोहणके लिये वैजयन्ती पताकारूपिणी हे माता भागीरथि! मैं तुमसे यह प्रार्थना करता हूँ कि तुम्हारे तटपर निवास करते हुए, तुम्हारे जलका पान करते हुए, तुम्हारी तरंगभंगीमें तरंगायमान होते हुए, तुम्हारा नामस्मरण करते हुए और तुम्हींमें दृष्टि लगाये हुए मेरा शरीरपात हो॥ १॥ हे गंगे! तुम्हारे तटवर्ती तरुवरके कोटरमें पक्षी होकर रहना अच्छा है तथा हे नरकनिवारिणि! तुम्हारे जलमें मत्स्य या कच्छप होकर जन्म लेना भी बहुत अच्छा है, किंतु दूसरी जगह मदमत्त गजराजोंके जमघटके घण्टारवसे भयभीत हुई शत्रुमहिलाओंसे स्तुत पृथ्वीपति भी होना अच्छा नहीं॥ २॥ हे मातः! मैं भले ही आपके आरपार रहनेवाला जन्म-मरणरूप क्लेशको सहन न करनेवाला कोई बैल, पक्षी, घोड़ा, सर्प अथवा हाथी हो जाऊँ, किंतु [आपसे दूर] किसी अन्य स्थानपर ऐसा राजा भी न होऊँ, जिसपर वारांगनाएँ मन्द-मन्द झनकारते हुए कंकणोंकी सुमधुर ध्वनिसे युक्त चमर डुला रही हों॥ ३॥ हे परमेश्वरि! हे त्रिपथगे! हे भागीरथि! [मरनेके अनन्तर] देवांगनाओंके करकमलोंमें सुशोभित सुन्दर चमरोंकी हवासे सेवित हुआ मैं अपने मृत शरीरको काकोंसे कुरेदा जाता हुआ, कुत्तोंसे भक्षित होता हुआ, गीदड़ोंसे लुण्ठित होता हुआ, तुम्हारे स्त्रोतमें पड़कर बहता हुआ, कभी किनारेके स्वल्प जलमें हिलता हुआ और फिर तरंगभंगियोंसे आन्दोलित होता हुआ भी क्या कभी देखूँगा?॥ ४॥

अभिनवबिसवल्ली पादपद्मस्य विष्णो-
मदनमथनमौलेर्मालतीपुष्पमाला ।
जयति जयपताका काप्यसौ मोक्षलक्ष्म्याः
क्षपितकलिकलङ्का जाह्नवी नः पुनातु॥ ५॥
एतत्तालतमालसालसरलव्यालोलवल्लीलता-
च्छन्नं सूर्यकरप्रतापरहितं शङ्खेन्दुकुन्दोज्ज्वलम्।
गन्धर्वामरसिद्धकिन्नरवधूत्तुङ्गस्तनास्फालितं
स्नानाय प्रतिवासरं भवतु मे गाङ्गं जलं निर्मलम्॥ ६॥
गाङ्गं वारि मनोहारि मुरारिचरणच्युतम्।
त्रिपुरारिशिरश्चारि पापहारि पुनातु माम्॥ ७॥
पापापहारि दुरितारि तरङ्गधारि
शैलप्रचारि गिरिराजगुहाविदारि।
झङ्कारकारि हरिपादरजोऽपहारि
गाङ्गं पुनातु सततं शुभकारि वारि॥ ८॥
गङ्गाष्टकं पठति यः प्रयतः प्रभाते वाल्मीकिना विरचितं शुभदं मनुष्यः।
प्रक्षाल्य गात्रकलिकल्मषपङ्कमाशु मोक्षं लभेत् पततं नैव नरो भवाब्धौ॥ ९॥

॥ इति श्रीमहर्षिवाल्मीकिविरचितं श्रीगङ्गाष्टकं सम्पूर्णम्॥

जो भगवान् विष्णुके चरणकमलका नूतनमृणाल (कमलनाल) है तथा कामारि त्रिपुरारिके ललाटकी मालती-माला है, वह मोक्षलक्ष्मीकी विलक्षण विजयपताका जयको प्राप्त हो। कलिकलंकको नष्ट करनेवाली, वह जाह्नवी हमें पवित्र करे॥ ५॥ जो ताल, तमाल, साल, सरल तथा चंचल वल्लरी और लताओंसे आच्छादित है, सूर्यकिरणोंके तापसे रहित है, शंख, कुन्द और चन्द्रके समान उज्ज्वल है तथा गन्धर्व, देवता, सिद्ध और किन्नरोंकी कामिनियोंके पीन पयोधरोंसे आस्फालित (टकराया हुआ) है, वह अत्यन्त निर्मल गंगाजल नित्यप्रति मेरे स्नानके लिये हो॥ ६॥ जो श्रीमुरारिके चरणोंसे उत्पन्न हुआ है, श्रीशंकरके सिरपर विराजमान है तथा सम्पूर्ण पापोंको हरण करनेवाला है, वह मनोहर गंगाजल मुझे पवित्र करे॥ ७॥ जो पापोंको हरण करनेवाला, दुष्कर्मोंका शत्रु, तरंगमय, शैल-खण्डोंपर बहनेवाला, पर्वतराज हिमालयकी गुहाओंको विदीर्ण करनेवाला, मधुर कलकल-ध्वनियुक्त और श्रीहरिकी चरणरजको धोनेवाला है, वह निरन्तर शुभकारी गंगाजल मुझे पवित्र करे॥ ८॥ जो पुरुष वाल्मीकिजीके रचे हुए इस कल्याणप्रद गंगाष्टकको प्रात:काल एकाग्रचित्तसे पढ़ता है, वह अपने शरीरके कलिकल्मषरूप कीचड़को धोकर शीघ्र ही मोक्ष प्राप्त करता है और फिर संसार-समुद्रमें नहीं गिरता॥ ९॥

॥ इस प्रकार श्रीमहर्षिवाल्मीकिविरचित श्रीगङ्गाष्टक सम्पूर्ण हुआ॥

श्रीशङ्कराचार्यकृत गङ्गास्तुति

देवि सुरेश्वरि भगवति गङ्गे त्रिभुवनतारिणि तरलतरङ्गे।
शङ्करमौलिविहारिणि विमले मम मतिरास्तां तव पदकमले॥ १॥
भागीरथि सुखदायिनि मातस्तव जलमहिमा निगमे ख्यातः।
नाहं जाने तव महिमानं पाहि कृपामयि मामज्ञानम्॥ २॥
हरिपदपाद्यतरङ्गिणि गङ्गे हिमविधुमुक्ताधवलतरङ्गे।
दूरीकुरु मम दुष्कृतिभारं कुरु कृपया भवसागरपारम्॥ ३॥
तव जलममलं येन निपीतं परमपदं खलु तेन गृहीतम्।
मातर्गङ्गे त्वयि यो भक्तः किल तं द्रष्टुं न यमः शक्तः॥ ४॥
पतितोद्धारिणि जाह्नवि गङ्गे खण्डितगिरिवरमण्डितभङ्गे।
भीष्मजननि हे मुनिवरकन्ये पतितनिवारिणि त्रिभुवनधन्ये॥ ५॥
कल्पलतामिव फलदां लोके प्रणमति यस्त्वां न पतति शोके।
पारावारविहारिणि गङ्गे विमुखयुवतिकृततरलापाङ्गे॥ ६॥
तव चेन्मातः स्त्रोतःस्नातः पुनरपि जठरे सोऽपि न जातः।
नरकनिवारिणि जाह्नवि गङ्गे कलुषविनाशिनि महिमोत्तुङ्गे॥ ७॥

हे देवि गंगे! तुम देवगणकी ईश्वरी हो, हे भगवति! तुम त्रिभुवनको तारनेवाली, विमल और तरल तरंगमयी तथा शंकरके मस्तकपर विहार करनेवाली हो। हे मातः! तुम्हारे चरणकमलोंमें मेरी मति लगी रहे॥ १॥ हे भागीरथि! तुम सब प्राणियोंको सुख देती हो, हे मातः! वेद-शास्त्रमें तुम्हारे जलका माहात्म्य वर्णित है, मैं तुम्हारी महिमा कुछ नहीं जानता, हे दयामयि! मुझ अज्ञानीकी रक्षा करो॥ २॥ हे गंगे! तुम श्रीहरिके चरणोंकी चरणोदकमयी नदी हो, हे देवि! तुम्हारी तरंगें हिम, चंद्रमा और मोतीकी भाँति श्वेत हैं, तुम मेरे पापोंका भार दूर कर दो और कृपा करके मुझे भवसागरके पार उतारो॥ ३॥ हे देवि! जिसने तुम्हारा जल पी लिया, अवश्य ही उसने परमपद पा लिया, हे मातः गंगे! जो तुम्हारी भक्ति करता है, उसको यमराज नहीं देख सकते (अर्थात् तुम्हारे भक्तगण यमपुरीमें न जाकर वैकुंठमें जाते हैं)॥ ४॥ हे पतितजनोंका उद्धार करनेवाली जह्नुकुमारी गंगे! तुम्हारी तरंगें गिरिराज हिमालयको खंडित करके बहती हुई सुशोभित होती हैं, तुम भीष्मकी जननी और जह्नुमुनिकी कन्या हो, पतितपावनी होनेके कारण तुम त्रिभुवनमें धन्य हो॥ ५॥ हे मातः! तुम इस लोकमें कल्पलताकी भाँति फल प्रदान करनेवाली हो, तुम्हें जो प्रणाम करता है, वह कभी शोकमें नहीं पड़ता, हे गंगे! मानिनी वनिताके समान चंचल कटाक्षवाली तुम समुद्रके साथ विहार करती हो॥ ६॥ हे गंगे! जिसने तुम्हारे प्रवाहमें स्नान कर लिया, वह फिर मातृगर्भमें प्रवेश नहीं करता, हे जाह्नवि! तुम भक्तोंको नरकसे बचाती हो और उनके पापोंका नाश करती हो, तुम्हारा माहात्म्य अतीव उच्च है॥ ७॥

पुनरसदङ्गे पुण्यतरङ्गे जय जय जाह्नवि करुणापाङ्गे।
इन्द्रमुकुटमणिराजितचरणे सुखदे शुभदे भृत्यशरण्ये॥ ८ ॥
रोगं शोकं तापं पापं हर मे भगवति कुमतिकलापम्।
त्रिभुवनसारे वसुधाहारे त्वमसि गतिर्मम खलु संसारे॥ ९ ॥
अलकानन्दे परमानन्दे कुरु करुणां मयि कातरवन्द्ये।
तव तटनिकटे यस्य निवासः खलु वैकुण्ठे तस्य निवासः॥ १० ॥
वरमिह नीरे कमठो मीनः किं वा तीरे शरटः क्षीणः।
अथवा श्वपचो मलिनो दीनस्तव न हि दूरे नृपतिकुलीनः॥ ११ ॥
भो भुवनेश्वरि पुण्ये धन्ये देवि द्रवमयि मुनिवरकन्ये।
गङ्गास्तवमिमममलं नित्यं पठति नरो यः स जयति सत्यम्॥ १२ ॥
येषां हृदये गङ्गाभक्तिस्तेषां भवति सदा सुखमुक्तिः।
मधुराकान्तापज्झटिकाभिः परमानन्दकलितललिताभिः॥ १३ ॥
गङ्गास्तोत्रमिदं भवसारं वाञ्छितफलदं विमलं सारम्।
शङ्करसेवकशङ्कररचितं पठति सुखी स्तव इति च समाप्तः॥ १४ ॥

॥ इति श्रीमच्छङ्कराचार्यविरचितं श्रीगङ्गास्तोत्रं सम्पूर्णम्॥

हे करुणाकटाक्षवाली जह्नुपुत्री गंगे! मेरे अपावन अंगोंपर अपनी पावन तरंगोंसे युक्त हो उल्लसित होनेवाली, तुम्हारी जय हो! जय हो!! तुम्हारे चरण इन्द्रके मुकुटमणिसे प्रदीप्त हैं, तुम सबको सुख और शुभ देनेवाली हो और अपने सेवकको आश्रय प्रदान करती हो॥ ८॥ हे भगवति! तुम मेरे रोग, शोक, ताप, पाप और कुमति-कलापको हर लो, तुम त्रिभुवनकी सार और वसुधाका हार हो, हे देवि! इस संसारमें एकमात्र तुम्हीं मेरी गति हो॥ ९॥ हे दुखियोंकी वन्दनीया देवि गंगे! तुम अलकापुरीको आनन्द देनेवाली और परमानन्दमयी हो, तुम मुझपर कृपा करो, हे मातः! जो तुम्हारे तटके निकट वास करता है, वह मानो वैकुंठमें ही वास करता है॥ १०॥ हे देवि! तुम्हारे जलमें कच्छप या मीन बनकर रहना अच्छा है, तुम्हारे तीरपर दुबला-पतला गिरगिट (कृकलास) बनकर रहना अच्छा है या अति मलिन दीन चांडालकुलमें जन्म ग्रहणकर रहना अच्छा है, परंतु (तुमसे) दूर कुलीन नरपति होकर रहना भी अच्छा नहीं॥ ११॥ हे देवि! तुम त्रिभुवनकी ईश्वरी हो, तुम पावन और धन्य हो, जलमयी तथा मुनिवरकी कन्या हो। जो प्रतिदिन इस गंगास्तोत्रका पाठ करता है, वह निश्चय ही संसारमें जयलाभ कर सकता है॥ १२॥ जिनके हृदयमें गंगाके प्रति अचला भक्ति है, वे सदा ही आनन्द और मुक्तिलाभ करते हैं; यह स्तुति परमानंदमयी सुललित पदावलीसे युक्त, मधुर और कमनीय है॥ १३॥ इस असार-संसारमें उक्त गंगास्तोत्र ही निर्मल सारवान् पदार्थ है, यह भक्तोंको अभिलषित फल प्रदान करता है; शंकरके सेवक शंकराचार्यकृत इस स्तोत्रको जो पढ़ता है, वह सुखी होता है—इस प्रकार यह स्तोत्र समाप्त हुआ॥ १४॥

॥ इस प्रकार श्रीमच्छंकराचार्यविरचित श्रीगंगास्तोत्र संपूर्ण हुआ॥

श्रीतुलसीदासजीकी गंगा-प्रार्थना

जय जय भगीरथनन्दिनि, मुनि-चय चकोर-चन्दिनि, नर-नाग-बिबुध-बन्दिनि जय जह्नु बालिका।
बिस्नु-पद-सरोजजासि, ईस-सीसपर बिभासि, त्रिपथगासि, पुन्यरासि, पाप-छालिका॥ १॥
बिमल बिपुल बहसि बारि, सीतल त्रयताप-हारि, भँवर बर बिभंगतर तरंग-मालिका।
पुरजन पूजोपहार, सोभित ससि धवलधार, भंजन भव-भार, भक्ति-कल्पथालिका॥ २॥
निज तटबासी बिहंग, जल-थर-चर पसु-पतंग, कीट, जटिल तापस सब सरिस पालिका।
तुलसी तव तीर तीर सुमिरत रघुबंस-बीर, बिचरत मति देहि मोह-महिष-कालिका॥ ३॥

हे भगीरथनन्दिनी! तुम्हारी जय हो, जय हो। तुम मुनियोंके समूहरूपी चकोरोंके लिये चन्द्रिकारूप हो। मनुष्य, नाग और देवता तुम्हारी वन्दना करते हैं। हे जह्नुकी पुत्री! तुम्हारी जय हो। तुम भगवान् विष्णुके चरणकमलसे उत्पन्न हुई हो; शिवजीके मस्तकपर शोभा पाती हो; स्वर्ग, भूमि और पाताल—इन तीन मार्गोंसे तीन धाराओंमें होकर बहती हो। पुण्योंकी राशि और पापोंको धोनेवाली हो॥ १॥

तुम अगाध निर्मल जलको धारण किये हो, वह जल शीतल और तीनों तापोंको हरनेवाला है। तुम सुन्दर भँवर और अति चंचल तरंगोंकी माला धारण किये हो। नगर-निवासियोंने पूजाके समय जो सामग्रियाँ भेंट चढ़ायी हैं, उनसे तुम्हारी चन्द्रमाके समान धवल धारा शोभित हो रही है। वह धारा संसारके जन्म-मरणरूप भारको नाश करनेवाली तथा भक्तिरूपी कल्पवृक्षकी रक्षाके लिये थाल्हारूप है॥ २॥

तुम अपने तीरपर रहनेवाले पक्षी, जलचर, थलचर, पशु, पतंग, कीट और जटाधारी तपस्वी आदि सबका समानभावसे पालन करती हो। हे मोहरूपी महिषासुरको मारनेके लिये कालिकारूप गङ्गाजी! मुझ तुलसीदासको ऐसी बुद्धि दो कि जिससे वह श्रीरघुनाथजीका स्मरण करता हुआ तुम्हारे तीरपर विचरा करे॥ ३॥ [**विनय-पत्रिका**]

श्रीगंगाजीकी आरती

जय गंगा मैया-माँ जय सुरसरि मैया।
भव-वारिधि उद्धारिणि अतिहि सुदृढ़ नैया॥

हरि-पद-पद्म-प्रसूता विमल वारिधारा।
ब्रह्मद्रव भागीरथि शुचि पुण्यागारा॥
शंकर-जटा विहारिणि हारिणि त्रय-तापा।
सगर-पुत्र-गण-तारिणि, हरणि सकल पापा॥
‘गंगा-गंगा’ जो जन उच्चारत मुखसों।
दूर देशमें स्थित भी तुरत तरत सुखसों॥

मृतकी अस्थि तनिक तुव जल-धारा पावै।
सो जन पावन होकर परम धाम जावै॥
तव तटबासी तरुवर, जल-थल-चरप्राणी।
पक्षी-पशु-पतंग गति पावैं निर्वाणी॥
मातु! दयामयि कीजै दीननपर दाया।
प्रभु-पद-पद्म मिलाकर हरि लीजै माया॥

गंगा-गौरव

धर्मद्रवं ह्यपां बीजं वैकुण्ठचरणच्युतम् । धृतं मूर्ध्नि महेशेन यद्गाङ्गममलं जलम्॥

तद्ब्रह्मैव न सन्देहो निर्गुणं प्रकृतेः परम् । तेन किं समतां गच्छेदपि ब्रह्माण्डगोचरे॥

जो धर्मद्रव (धर्मका ही द्रवीभूत स्वरूप) है, जलका आदि कारण है, भगवान् विष्णुके चरणोंसे प्रकट हुआ है तथा जिसे भगवान् शंकरने अपने मस्तकपर धारण कर रखा है, वह गंगाजीका निर्मल जल प्रकृतिसे परे निर्गुण ब्रह्म ही है—इसमें तनिक भी सन्देह नहीं है। अतः ब्रह्माण्डके भीतर ऐसी कौन-सी वस्तु है, जो गंगाजलकी समानता कर सके। **[पद्मपुराण]**

श्रीगंगाजीके नाम-कीर्तनका फल

गङ्गा गङ्गेति यो ब्रूयाद्योजनानां शतैरपि।
नरो न नरकं याति किं तया सदृशं भवेत्॥

जो सौ योजन दूरसे भी 'गंगा-गंगा' कहता है, वह मनुष्य नरकमें नहीं पड़ता; फिर गंगाजीके समान कौन हो सकता है? **[पद्मपुराण]**

गङ्गा गङ्गेति यो ब्रूयाद्योजनानां शतैरपि।
मुच्यते सर्वपापेभ्यो विष्णुलोकं स गच्छति॥

जो सैकड़ों योजन दूरसे भी 'गंगा-गंगा' कहता है, वह सब पापोंसे मुक्त हो श्रीविष्णुलोकको प्राप्त होता है। **[पद्मपुराण]**

गङ्गा गङ्गेति यन्नाम सकृदप्युच्यते यदा।
तदैव पापनिर्मुक्तो ब्रह्मलोके महीयते॥

'गंगा-गंगा' इस नामका एक बार भी उच्चारण कर लेनेसे मनुष्य पापरहित होकर ब्रह्मलोकमें प्रतिष्ठा प्राप्त करता है। **[बृहन्नारदीयपुराण]**

श्रीगंगाजीके स्मरणका फल

उत्क्रामद्भिश्च यः प्राणैः प्रयतः शिष्टसम्मतः।
चिन्तयेन्मनसा गङ्गां स गतिं परमां लभेत्॥

जो साधु पुरुषोंद्वारा सम्मानित तथा संयतचित्त मनुष्य प्राण निकलते समय मन-ही-मन गंगाजीका स्मरण करता है, वह परम उत्तम गतिको प्राप्त कर लेता है। **[महाभारत]**

गङ्गेति स्मरणादेव क्षयं याति च पातकम्।
कीर्तनादतिपापानि दर्शनाद् गुरुकल्मषम्॥

गंगाजीके नामका स्मरण करनेमात्रसे पातक, कीर्तनसे अतिपातक और दर्शनसे भारी-से-भारी पाप (महापातक) भी नष्ट हो जाते हैं। **[पद्मपुराण]**

ये स्मरिष्यन्ति लोकेऽत्र जाह्नवीति सकृन्मुने।
न तेषां प्रभविष्यन्ति पापानि दुःखमेव वा॥

[गंगाजी जह्नुमुनिसे कहती हैं—] हे मुने! इस संसारमें जो लोग मेरा 'जाह्नवी' के नामसे एक बार भी स्मरण करेंगे; उन्हें पाप अथवा दुःख नहीं होंगे। **[महाभागवत]**

प्रातरुत्थाय यो गङ्गां हेलयापि नरः स्मरेत्।
न तस्याशुभभीतिस्तु विद्यते भुवनत्रये॥
प्रवर्तते गृहे सम्पद्विनश्यन्त्यापदः क्षणात्।
पापानि संक्षयं यान्ति जन्मान्तरकृतान्यपि॥
भवन्ति च सुपुण्यानि चाक्षयानि महामते।
दुःस्वप्नदर्शने वापि विपत्तावतिदुर्गमे।
स्मृत्वा गङ्गां सकृन्मर्त्यो मुच्यते नात्र संशयः॥

[श्रीमहादेवजी नारदजीसे कहते हैं—] जो मनुष्य प्रातःकाल उठकर अनिच्छासे भी गंगाका स्मरण कर लेता है, उसे तीनों लोकोंमें अमंगलका भय नहीं होता है। महामते! उसके घरमें सम्पदा आ जाती है, क्षण भरमें उसकी सभी विपत्तियाँ दूर हो जाती हैं। जन्म-जन्मान्तरमें किये गये पाप भी नष्ट हो जाते हैं तथा उसके पुण्य अक्षय हो जाते हैं। दुःस्वप्न देखनेपर, विपत्तिकालमें तथा अत्यन्त दुर्गम स्थानपर एक बार भी गंगाका स्मरण कर लेनेपर मनुष्य कष्टोंसे छुटकारा पा जाता है, इसमें सन्देह नहीं है। **[महाभागवत]**

न गङ्गास्मरणं यत्र दिने समुपजायते।
तद्दिनं दुर्दिनं ज्ञेयं मेघाच्छन्नं न दुर्दिनम्॥

जिस दिन गंगाका स्मरण नहीं किया जाता है, वही दिन दुर्दिन है। मेघाच्छन्न दिन दुर्दिन नहीं है। **[महाभागवत]**

गंगाको उद्देश्य करके यात्रा करनेका फल

गङ्गामुद्दिश्य यो गच्छेन्नरः प्रयतमानसः।
पदे पदेऽश्वमेधः स्याद्वाजपेयशतं तथा॥
नृत्यन्ति पितरः सर्वे गङ्गामुद्दिश्य गच्छताम्।
पापानि प्रपलायन्ते गर्हितान्यपि दूरतः॥
गङ्गामुद्दिश्य सङ्गच्छन् श्रान्तो यस्य जलं पिबेत्।
कूपवापीतडागानां तस्य भाग्यं महत्तरम्॥

[महादेवजी कहते हैं—] हे नारद! जो विशुद्धात्मा मनुष्य गंगा-स्नानको उद्देश्य करके यात्रा करता है, उसे पग-पगपर अश्वमेध तथा सैकड़ों वाजपेय यज्ञका फल प्राप्त होता है। गंगास्नानके निमित्त जानेवाले मनुष्यके सभी पितरगण प्रसन्न होकर नाचने लगते हैं और उसके महानिन्दनीय पाप भी दूरसे ही भाग जाते हैं। गंगाको उद्देश्य करके जानेवाला थका हुआ मनुष्य जिसके कुएँ, बावली या सरोवरका जल पी लेता है, उस मनुष्यका महान् भाग्य समझना चाहिये। **[महाभागवत]**

श्रीगंगाजीके दर्शनका फल

गङ्गादर्शनमात्रेण ब्रह्महापि नरः क्षणात्।
मुच्यते घोरपापेभ्यो मुने नास्त्यत्र संशयः॥
दर्शनात्कृतकृत्याश्च गङ्गायाः सर्वदेवताः।
ऋषयश्च महात्मानो मानवानां तु का कथा॥
सम्पर्केणापि यो गङ्गां सम्पश्यति महामते।
न सोऽपि यमदण्ड्यः स्यात्कृतपापसहस्रकः॥

[श्रीमहादेवजी नारदजीसे कहते हैं—] हे मुने! ब्रह्महत्या करनेवाला मनुष्य भी गंगाके दर्शनमात्रसे क्षणभरमें घोर पापोंसे मुक्त हो जाता है, इसमें संशय नहीं है। भगवती गंगाके दर्शनसे सभी देवता, ऋषिगण तथा महात्मा भी कृतकृत्य होते हैं, फिर मनुष्योंका क्या कहना? हे महामते! जो मनुष्य सम्पर्कसे भी भगवती गंगाका दर्शन प्राप्त कर लेता है, हजारों पाप करनेवाला होनेपर भी वह यमदण्डका भागी नहीं होता। **[महाभागवत]**

दूताः पश्यन्ति ये गङ्गां सम्पर्केणातिपावनीम्।
न ते कदाचिन्मे दण्ड्या अपि पापशतैर्युताः॥

[धर्मराज अपने दूतोंसे कहते हैं—] हे दूतो! जिन्हें दूसरोंके सम्पर्कसे अनायास अतिपावनी भगवती गंगाका दर्शन हो जाता है, वे सैकड़ों पापोंसे युक्त रहनेपर भी मेरे द्वारा कभी दण्डित नहीं किये जाते। **[महाभागवत]**

वाङ्मनःकर्मजैर्ग्रस्तः पापैरपि पुमानिह।
वीक्ष्य गङ्गां भवेत्पूतो अत्र मे नास्ति संशयः॥

मन, वाणी और क्रियाद्वारा होनेवाले पापोंसे ग्रस्त मनुष्य भी गंगाजीका दर्शन करनेमात्रसे पवित्र हो जाता है, इसमें मुझे संशय नहीं है। **[महाभारत]**

नारण्यैर्नेष्टविषयैर्न सुतैर्न धनागमैः।
तथा प्रसादो भवति गङ्गां वीक्ष्य यथा भवेत्॥
पूर्णमिन्दुं यथा दृष्ट्वा नृणां दृष्टिः प्रसीदति।
तथा त्रिपथगां दृष्ट्वा नृणां दृष्टिः प्रसीदति॥

गंगाजीके दर्शनसे [गंगाजीमें भक्ति रखनेवाले पुरुषको] जितनी प्रसन्नता होती है, उतनी वनके दर्शनोंसे, अभीष्ट विषयसे, पुत्रोंसे तथा धनकी प्राप्तिसे भी नहीं होती। जैसे पूर्ण चन्द्रमाका दर्शन करके मनुष्योंकी दृष्टि प्रसन्न हो जाती है, वैसे ही त्रिपथगा गंगाका दर्शन करके मनुष्योंके नेत्र आनन्दसे खिल उठते हैं। **[महाभारत]**

दर्शनात् स्पर्शनात् पानात्तथा गङ्गेति कीर्तनात्।
पुनाति पुण्यपुरुषान् शतशोऽथ सहस्रशः॥

जो मानव गंगाका दर्शन, स्पर्श, जलपान अथवा 'गङ्गा' इस नामका कीर्तन करता है, वह अपनी सैकड़ों-हजारों पीढ़ियोंके पुरुषोंको पवित्र कर देता है। **[अग्नि०]**

श्रीगंगाजीका दर्शन करानेका फल

इयं गङ्गेति नियतं प्रतिष्ठा गुहस्य रुक्मस्य च गर्भयोषा।
प्रातस्त्रिवर्गा घृतवहा विपाप्मा गङ्गावतीर्णा वियतो विश्वतोया॥

'ये गंगाजी हैं'—ऐसा कहकर जो दूसरे मनुष्योंको उनका दर्शन कराता है, उसके लिये भगवती भागीरथी सुनिश्चित प्रतिष्ठा (अक्षय पद प्रदान करनेवाली) हैं। वे कार्तिकेय और सुवर्णको अपने गर्भमें धारण करनेवाली, पवित्र जलकी धारा बहानेवाली और पाप दूर करनेवाली हैं। वे आकाशसे पृथ्वीपर उतरी हुई हैं। उनका जल सम्पूर्ण विश्वके लिये पीनेयोग्य है। उनमें प्रात:काल स्नान करनेसे धर्म, अर्थ और काम—तीनों वर्गोंकी सिद्धि होती है। **[महाभारत]**

श्रीगंगाजीके स्पर्शका फल

गङ्गोर्मिभिरथो दिग्धः पुरुषं पवनो यदा।
स्पृशते सोऽस्य पाप्मानं सद्य एवापकर्षति॥

गंगाकी तरंगमालाओंसे भीगकर बहनेवाली वायु जब मनुष्यके शरीरका स्पर्श करती है, उसी समय वह उसके सारे पापोंको नष्ट कर देती है। [**महाभारत**]

सप्तावरान् सप्त परान् पितॄंस्तेभ्यश्च ये परे।
पुमांस्तारयते गङ्गां वीक्ष्य स्पृष्ट्वावगाह्य च॥

गंगाजीका दर्शन, उनके जलका स्पर्श तथा उस जलके भीतर स्नान करके मनुष्य सात पीढ़ी पहलेके पूर्वजोंका और सात पीढ़ी आगे होनेवाली संतानोंका तथा इनसे भी ऊपरके पितरों और संतानोंका उद्धार कर देता है। [**महाभारत**]

श्रीगंगाजीको प्रणाम करनेका फल

आगत्य प्रणमेद्देवीं यस्तु भक्त्या समाहितः।
शरीरं सार्थकं तस्य नृषु जन्म च सार्थकम्॥
धन्याश्च पितरस्तस्य स तु धन्यतमः स्मृतः।
न तस्य विद्यते पापं नापि मृत्युभयं तथा॥
अतुलं लभते सौख्यं परत्र च महामते।
गङ्गायां जायते मृत्युर्गङ्गास्मृतिपुरःसरः॥

जो मनुष्य गंगाजीके पास आ करके भक्तिपरायण होकर गंगादेवीको प्रणाम करता है, उसका शरीर तथा मानवजन्म सार्थक है। उसके पितर धन्य हैं और उसे तो धन्यतम कहा गया है। उसे पाप नहीं लगता और मृत्युका भी भय नहीं रह जाता। महामते! वह मनुष्य परलोकमें अतुलनीय सुख प्राप्त करता है, उसकी गंगामें मृत्यु होती है और आगे भी निरन्तर उसे गंगा-स्मरण बना रहता है। [**महाभागवत**]

श्रीगंगाजीके तटपर निवासका फल

तिष्ठेद् युगसहस्रं तु पदेनैकेन यः पुमान्।
मासमेकं तु गङ्गायां समौ स्यातां न वा समौ॥
लम्बतेऽवाक्शिरा यस्तु युगानामयुतं पुमान्।
तिष्ठेद् यथेष्टं यश्चापि गङ्गायां स विशिष्यते॥

जो पुरुष एक हजार युगोंतक एक पैरसे खड़ा होकर तपस्या करता है और जो एक मासतक गंगातटपर निवास करता है, वे दोनों समान हो सकते हैं अथवा यह भी सम्भव है कि समान न हों। जो मनुष्य दस हजार युगोंतक नीचे सिर करके वृक्षमें लटका रहे और जो इच्छानुसार गंगाजीके तटपर निवास करे, उन दोनोंमें गंगाजीके तटपर निवास करनेवाला ही श्रेष्ठ है। [**महाभारत**]

श्रीगंगाजीके सेवनका फल

तपसा ब्रह्मचर्येण यज्ञैस्त्यागेन वा पुनः।
गतिं तां न लभेज्जन्तुर्गङ्गां संसेव्य यां लभेत्॥

गंगाजीका सेवन करनेसे जीव जिस उत्तम गतिको प्राप्त करता है, उसे वह तपस्या, ब्रह्मचर्य, यज्ञ अथवा त्यागसे भी नहीं पा सकता। [**महाभारत**]

अलङ्कृतास्त्रयो लोकाः पथिभिर्विमलैस्त्रिभिः।
यस्तु तस्या जलं सेवेत् कृतकृत्यः पुमान्भवेत्॥

जिन्होंने तीन निर्मल मार्गोंद्वारा आकाश, पाताल तथा भूतल—इन तीन लोकोंको अलंकृत किया है, उन गंगाजीके जलका जो मनुष्य सेवन करेगा, वह कृतकृत्य हो जायगा। [**महाभारत**]

श्रीगंगाजीके शरण-ग्रहणका फल

ऋषिष्टुतां विष्णुपदीं पुराणां सुपुण्यतोयां मनसापि लोके।
सर्वात्मना जाह्नवीं ये प्रपन्नास्ते ब्रह्मणः सदनं सम्प्रयाताः॥

ऋषियोंद्वारा जिनकी स्तुति होती है, जो भगवान् विष्णुके चरणोंसे उत्पन्न, अत्यन्त प्राचीन तथा परम पावन जलसे भरी हुई हैं, उन गंगाजीकी जगत्में जो लोग मनके द्वारा भी सब प्रकारसे शरण लेते हैं, वे देहत्यागके पश्चात् ब्रह्मलोकमें जाते हैं। [**महाभारत**]

अप्रतिष्ठाश्च ये केचिदधर्मशरणाश्च ये।
तेषां प्रतिष्ठा गङ्गेह शरणं शर्म वर्म च॥

जगत्में जिनका कहीं आधार नहीं है तथा जिन्होंने धर्मकी शरण नहीं ली है, उनका आधार और उन्हें शरण देनेवाली श्रीगंगाजी ही हैं। वे उनका कल्याण करनेवाली तथा कवचकी भाँति उन्हें सुरक्षित रखनेवाली हैं। [**महाभारत**]

गंगाजलके पानका फल

यथा सुराणाममृतं पितॄणां च यथा स्वधा।
सुधा यथा च नागानां तथा गङ्गाजलं नृणाम्॥

जैसे देवताओंको अमृत, पितरोंको स्वधा और नागोंको सुधा तृप्त करती है, उसी प्रकार मनुष्योंके लिये गंगाजल ही पूर्ण तृप्तिका साधन है। **[महाभारत]**

यस्तु सूर्येण निष्टप्तं गाङ्गेयं पिबते जलम्।
गवां निर्हारनिर्मुक्ताद् यावकात् तद् विशिष्यते॥

जो मनुष्य सूर्यकी किरणोंसे तपे हुए गंगाजलका पान करता है, उसका वह जलपान गायके गोबरसे निकले हुए जौकी लप्सी खानेसे अधिक पवित्रकारक है। **[महाभारत]**

चान्द्रायणसहस्राच्च गङ्गाम्भःपानमुत्तमम्।
गङ्गां मासं तु संसेव्य सर्वयज्ञफलं लभेत्॥

[अग्निदेव कहते हैं—] एक हजार चान्द्रायणव्रतकी अपेक्षा गंगाजीके जलका पीना उत्तम है। एक मास गंगाजीका सेवन करनेवाला मनुष्य सब यज्ञोंका फल पाता है। **[अग्निपुराण]**

चिन्तामणिगुणाच्चापि गङ्गायास्तोयबिन्दवः।
विशिष्टा यत्प्रयच्छन्ति भक्तेभ्यो वाञ्छितं फलम्॥
गण्डूषमात्रतो भक्त्या सकृद् गङ्गाम्भसा नरः।
कामधेनुस्तनोद्भूतान् भुङ्क्ते दिव्यरसान्दिवि॥

चिन्तामणिके गुणोंसे भी बढ़कर गुणशाली गंगाजलके बिन्दु हैं, जो भक्तोंके मनोवांछित फलोंको विशेष रूपसे देनेवाले हैं। भक्तिपूर्वक एक कुल्ला गंगाजल पान कर लेनेपर मनुष्य मानो स्वर्गमें स्थित कामधेनुके स्तनोंसे निःसृत दिव्य रसोंका पान करता है। **[बृहन्नारदीयपुराण]**

सर्वाणि येषां गङ्गायास्तोयैः कृत्यानि सर्वदा।
देहं त्यक्त्वा नरास्ते तु मोदन्ते शिवसन्निधौ॥

जिन मनुष्योंके सब काम गंगाजलद्वारा सम्पन्न होते हैं, वे अपने इस नश्वर शरीरको छोड़नेके बाद शिवके समीप विराजमान होते हैं। **[नारदपुराण]**

देवाः सोमार्कसंस्थानि यथा शक्रादयो मुखैः।
अमृतान्युपभुञ्जन्ति तथा गङ्गाजलं नराः॥

जिस प्रकार इन्द्रादि प्रमुख देवता सोम तथा सूर्य-मण्डलमें विद्यमान अमृतरसका पान करते हैं, उसी प्रकार भक्त मनुष्य गंगाजलका पान करते हैं। **[बृहन्नारदीयपु०]**

कन्यादानैश्च विधिवद् भूमिदानैश्च भक्तितः।
अन्नदानैश्च गोदानैः स्वर्णदानादिभिस्तथा॥
रथाश्वगजदानैश्च यत्पुण्यं तु प्रकीर्तितम्।
ततः शतगुणं पुण्यं गङ्गाम्भश्चुलुकाशनात्॥

विधिपूर्वक अनेक कन्यादानोंके करनेसे, भक्तिपूर्वक भूमिदान करनेसे, अनेक बार अन्नदान, गोदान, स्वर्णदान आदि करनेसे तथा रथ-अश्व आदिके दानोंसे जो पुण्य कहा गया है, उससे शतगुणित अधिक पुण्य केवल चुल्लूभर गंगाजल पानसे होता है। **[बृहन्नारदीयपुराण]**

गंगास्नानका फल

[श्रीमहादेवजी नारदजीसे कहते हैं—] हे मुनिश्रेष्ठ! ब्रह्महत्या करनेवाला, गोवध करनेवाला, सुरापान करनेवाला तथा गुरुपत्नीगामी महापापी भी गंगामें स्नान कर लेनेपर महादेवी गंगाकी कृपासे घोर पापोंसे मुक्त हो जाता है। श्रेष्ठ भक्तिसे हीन मनुष्य भी बिना मन्त्र आदिके ही, ज्ञानपूर्वक अथवा अज्ञानपूर्वक मात्र एक बार गंगास्नान करके मुक्त हो जाता है। हे मुने! गंगातटपर भक्तियुक्त होकर विधिपूर्वक गंगाजलमें स्नान करनेसे मनुष्यको सात जन्मोंमें हो सकनेवाला अनन्त तथा अक्षय पुण्य प्राप्त होता है और उसे विपुल धन तथा परम सुखकी प्राप्ति होती है। वह नरश्रेष्ठ सभी पापोंसे मुक्त होकर परमपदको प्राप्त हो जाता है। यदि मनुष्य गंगाका स्मरण करते हुए अन्यत्र कहीं भी स्नान करता है तो वहाँ भी उसे गंगास्नानसे होनेवाले पुण्यके समान पुण्य प्राप्त होता है। हे मुनिश्रेष्ठ! जो मनुष्य प्रतिदिन प्रातःकाल गंगाके जलमें स्नान करता है, उस पुण्यात्माको साक्षात् दूसरे शिवके समान ही समझना चाहिये। उसके दर्शनसे पापी लोग पापसे मुक्त हो जाते हैं, इसमें सन्देह नहीं है। **[महाभागवत]**

स्नातानां शुचिभिस्तोयैर्गाङ्गेयैः प्रयतात्मनाम्।
व्युष्टिर्भवति या पुंसां न सा क्रतुशतैरपि॥

गंगाजीके पवित्र जलसे स्नान करके जिनका अन्तः-करण शुद्ध हो गया है, उन पुरुषोंके पुण्यकी जैसी वृद्धि होती है, वैसी सैकड़ों यज्ञ करनेसे भी नहीं हो सकती। **[महाभारत]**

श्रीगंगाजीकी बालू और मिट्टीके धारणका फल

जाह्नवीपुलिनोत्थाभिः सिकताभिः समुक्षितम्।
आत्मानं मन्यते लोको दिविष्ठमिव शोभितम्॥

गंगाजीके तटसे उड़े हुए बालुकाकणोंसे अभिषिक्त हुए अपने शरीरको ज्ञानी पुरुष स्वर्गलोकमें स्थित हुआ-सा शोभासम्पन्न मानता है। **[महाभारत]**

जाह्नवीतीरसम्भूतां मृदं मूर्ध्ना बिभर्ति यः।
बिभर्ति रूपं सोऽर्कस्य तमोनाशाय निर्मलम्॥

जो मनुष्य गंगाके तीरकी मिट्टी अपने मस्तकमें लगाता है, वह अज्ञानान्धकारका नाश करनेके लिये सूर्यके समान निर्मल स्वरूप धारण करता है। **[महाभारत]**

गंगाजलसे तर्पणका फल

य इच्छेत् सफलं जन्म जीवितं श्रुतमेव च।
स पितॄंस्तर्पयेद् गाङ्गमभिगम्य सुरांस्तथा॥

जो अपने जन्म, जीवन और वेदाध्ययनको सफल बनाना चाहता हो, वह गंगाजीके पास जाकर उनके जलसे देवताओं तथा पितरोंका तर्पण करे। **[महाभारत]**

जो लोग एकाग्रचित्त होकर गंगामें पितरोंका तर्पण करते हैं, उनके पितर निर्विकार ब्रह्मलोक पहुँच जाते हैं। गंगाजल उपलब्ध रहनेपर उसे छोड़कर अन्य जलसे पितरोंका तर्पण नहीं करना चाहिये। यदि कोई अज्ञान-वश ऐसा करता है, तो वह प्रायश्चित्तका भागी होता है। जो समाहित होकर गंगामें पितरोंका तर्पण करता है, उसे ही पुत्र कहा जाता है; अन्यको पुत्र नहीं कहा जाता। मनुष्यको अपने पितरोंकी तृप्तिके लिये गंगातीर्थमें जाकर श्राद्ध तथा तर्पण करना चाहिये अन्यथा वह नरकगामी होता है। गंगाको उद्देश्य करके जाते हुए मनुष्यको देखकर श्राद्धभोगकी इच्छा रखनेवाले उसके पितर प्रसन्न होकर हँसने और नाचने लगते हैं। गंगाके जलमें पकाया हुआ अन्न देवताओंको भी दुर्लभ है। उस अन्नसे श्राद्ध किये जानेपर पितरोंको संतृप्ति होती है। **[महाभागवत]**

श्रीगंगाजीमें पुरश्चरण, दान, ध्यान, जप, होमादिका फल

गङ्गायां तु पुरश्चर्यां कृत्वा पापविवर्जितः।
सिद्धमन्त्रो महाज्ञानी भवेद्वै साधकोत्तमः॥
दानं ध्यानं जपो होमोऽभ्यर्चनं श्राद्धतर्पणम्।
बहुपुण्यकरं प्रोक्तं गङ्गायां मुनिसत्तम॥

[महादेवजी नारदजीसे कहते हैं—] हे मुनिश्रेष्ठ! उत्तम साधक गंगामें पुरश्चरण करके पापसे रहित होकर मन्त्रसिद्ध तथा महाज्ञानी हो जाता है। गंगाके सान्निध्यमें किये गये दान, ध्यान, जप, होम, पूजन तथा श्राद्ध-तर्पण आदि महान् पुण्य-कारक कहे गये हैं। **[महाभागवत]**

गङ्गायां यो महादेवं बिल्वपत्रैः प्रपूजयेत्।
स कैवल्यमवाप्नोति कृतपापशतोऽपि चेत्॥

जो व्यक्ति भगवती गंगामें भगवान् शंकरका बिल्वपत्रोंसे पूजन करता है, सैकड़ों पाप करनेवाला होनेपर भी वह मुक्तिको प्राप्त कर लेता है। **[महाभागवत]**

गङ्गायां धर्मकर्माणि क्रियन्ते यानि कानि च।
अक्षयानि भवन्त्यस्य तानि सर्वाणि जैमिने॥

[महर्षि व्यासजी कहते हैं—] हे जैमिनि! गंगाजीमें जो कोई भी पुण्यकर्म किये जाते हैं, वे सभी अक्षय हो जाते हैं। **[पद्मपुराण]**

गंगामें देहत्यागका फल

गङ्गायां त्यजतां देहमहमाज्ञावशः स्वयम्।
ते नमस्याः सुरेन्द्राणां दण्डशङ्कास्ति तत्कुतः॥

[धर्मराज अपने दूतोंसे कहते हैं—] गंगामें देहत्याग करनेवाले प्राणियोंकी आज्ञाके मैं स्वयं अधीन हूँ। वे लोग इन्द्रादि देवताओंके लिये भी नमस्कारके योग्य हैं तो फिर मेरे द्वारा उन्हें दण्डित करनेकी शंका ही कहाँ है। **[महाभागवत]**

अनिच्छयापि गङ्गायां यद्देहपतनं भवेत्।
स विमुक्तोऽखिलैः पापैर्नरो नारायणो भवेत्॥

बिना इच्छाके भी यदि किसी व्यक्तिका गंगाजीमें देहपात हो जाय तो ऐसा मनुष्य सम्पूर्ण पापोंसे मुक्त होकर नारायण हो जाता है। **[पद्मपुराण]**

श्रीगंगाजीमें अस्थिपातका फल

यावदस्थि मनुष्यस्य गङ्गातोयेषु तिष्ठति।
तावद्वर्षसहस्राणि स्वर्गलोके महीयते॥

मनुष्यकी हड्डी जितने समयतक गंगाजीके जलमें पड़ी रहती है, उतने हजार वर्षोंतक वह स्वर्गलोकमें प्रतिष्ठित होता है। **[महाभारत]**

नमामि गङ्गे तव पादपङ्कजम्

कहते हैं कि स्वर्गलोकमें देवगण यह गीत गाते हैं कि वे व्यक्ति धन्य हैं, जो भारतभूमिमें जन्म लेते हैं—

'गायन्ति देवाः किल गीतकानि
धन्यास्तु ते भारतभूमिभागे।'

यह गीत देवतागण क्यों गाते हैं? क्या यह भारतमें जन्म लेनेवालोंकी विशेषता है या इस देशकी? नहीं, यह विशेषता तो भारतभूमिकी है, जिस भूमिपर पतितपावनी, कलिमलहारिणी, जगदुद्धारिणी माँ सुरसरि गंगाका सान्निध्य सबको सुलभतासे प्राप्त होता है।

माँ गंगाका यह सान्निध्य इतना चमत्कारी है कि दर्शन-स्पर्श, स्नान-पान और कीर्तनमात्रसे जन्म-मरणके बन्धनसे तो सदा-सर्वदाके लिये मनुष्यको मुक्त कर ही देता है, उसकी सात पीढ़ियोंको भी पवित्रकर तार देता है—

पुनाति कीर्तिता पापं दृष्टा भद्रं प्रयच्छति।
अवगाढा च पीता च पुनात्यासप्तमं कुलम्॥

(महाभारत, वनपर्व ८५।९३)

'गंगा अपना नाम उच्चारण करनेवालेके पापोंका नाश करती हैं, दर्शन करनेवालोंका कल्याण करती हैं तथा स्नान-पान करनेवालोंकी सात पीढ़ियोंतकको पवित्र करती हैं।'

जिस पतितपावनी गंगाका उद्गम ही सगरपुत्रोंके उद्धारके लिये हुआ, भगीरथकी तपस्या तथा त्रिदेवोंकी कृपासे जो पृथ्वीपर प्रवाहित हुईं और जिस गंगाजलके स्पर्शमात्रसे सगरपुत्र पापमुक्त हुए, वे गंगा स्वयमेव परमतीर्थ हैं—

'सर्वतीर्थमयी गङ्गा सर्वदेवमयो हरिः।'

(नृसिंहपुराण)

गंगामें सभी तीर्थ समाहित हैं। भगवान् हरिमें सम्पूर्ण देवता समाहित हैं। जिस गंगाजलकी एक-एक बूँदमें और तरल तरंगोंके एक-एक शीतल कणमें तीर्थ विद्यमान हों, उसके तीर्थत्वका वर्णन शब्दोंमें कहाँतक किया जा सकता है। महाभारतके वनपर्वमें कहा है कि **'न गङ्गासदृशं तीर्थं न देवः केशवात् परः॥'** 'गंगाके समान कोई तीर्थ नहीं है तथा केशवसे परे कोई देव नहीं है।' भगवान् विष्णुके चरणकमलोंसे निःसृत, ब्रह्माके कमण्डलुमें समाहित, भगवान् शंकरकी जटाओंमें विलीन तथा भगीरथके अथक प्रयासोंसे प्राप्त चिन्तामणिके सदृश लोकपावनी भगवती गंगाका सेवन क्षणभरके लिये भी जो प्राप्त कर ले, वह धन्य है।

गंगाजीका प्रादुर्भाव

अपने शास्त्रोंमें गंगाजीके प्रादुर्भावकी विभिन्न कथाएँ प्राप्त होती हैं। श्रीमद्भागवत एवं अन्य पुराणोंके अनुसार यह कथा है कि प्रह्लादके पौत्र दैत्योंके राजा बलिने त्रैलोक्यपर विजय प्राप्त करनेके अनन्तर श्रीशुक्राचार्यजीके आचार्यत्वमें महायज्ञका आयोजन किया। इन्द्रादि देवता दैत्योंसे पराभूत होकर अत्यन्त त्रस्त थे। परमात्म-प्रभु भगवान् विष्णु वामनरूप धारणकर यज्ञमें पधारे और उन्होंने बलिसे तीन पग धरतीकी याचना की। बलिने वामनभगवान्का अत्यधिक स्वागत किया और शुक्राचार्यके मना करनेपर भी तत्काल तीन पग भूमि देनेका संकल्प कर लिया। वामनभगवान्ने एक पगसे भूलोक माप लिया तथा दूसरे पगसे स्वर्गलोक (देवलोक) नापने लगे। उसी समय ब्रह्माजीने भगवान्के चरण-कमलकी पाद्य, अर्घ्य आदिसे पूजा की तथा चरणकमलका

प्रक्षालनकर उस जलको अपने कमण्डलुमें भर लिया। यही जल ब्रह्माके कमण्डलुसे निकलकर गंगाजलके रूपमें भूतभावन भगवान् सदाशिवकी जटाओंमें समाहित हो गया। इस प्रकार भगवती गंगा ब्रह्मा-विष्णु-महेश—इन तीनों देवताओंकी प्रिया हैं, इनकी शक्तिसे समन्वित हैं।

भगवान् विष्णुके चरणोंसे नि:सृत होनेके कारण भगवती गंगाको 'विष्णुपदी' कहते हैं।

गर्गसंहितामें गंगाजीकी एक दूसरी कथा भी है—एक अत्यन्त सुन्दर गन्धर्वनगर था। एक बार देवर्षि नारद अपनी वीणा बजाते हुए घूमते-फिरते उस गन्धर्व-नगरमें पहुँच गये। नगरकी सुन्दरता देखकर वे चमत्कृत थे। उस नगरमें जितने गन्धर्व थे, वे बहुत सुन्दर थे, परंतु सबके सब विकलांग थे। किसीका हाथ टूटा था, किसीका पैर टूटा था, किसीकी एक आँख फूटी थी। नारदजी यह सब देखकर अत्यधिक आश्चर्यचकित थे। वे इस प्रकारकी विकलांगताका कारण ढूँढ़नेकी चेष्टा करने लगे, पर वे जिससे भी पूछते, वह उनकी बातका उत्तर न देकर उनकी उपेक्षा करता था। एक वृद्ध गन्धर्वसे विशेष अनुनय-विनयकर इसका कारण पूछा तो वह वृद्ध द्रवीभूत होकर बोला कि कुछ समय पूर्व नारद नामका एक साधु वीणा लेकर इस नगरमें आया था। वीणावादनकी अनभिज्ञता होते हुए भी उसने यहाँ वीणा बजायी। उसका असंगत वीणावादन सुनकर वीणा-वादिनी भगवती शारदाने क्रोधवश इस गन्धर्वनगरके सभी जीवोंको विकलांग बना दिया। तबसे उस नारदका पता नहीं है। यह घटना सुनकर नारदजी अत्यन्त द्रवित हो गये, उन्होंने उस वृद्ध गन्धर्वसे पूछा—'अब इस गलतीके सुधारका उपाय क्या है?' उस वृद्धने कहा कि इसका उपाय एक ही है कि नारदजी वीणावादनकी शिक्षा ग्रहणकर यहाँ आयें और सुसंगतरूपसे वीणावादन करें तो यहाँकी विकलांगता दूर हो सकती है। नारदजी इस कार्यको करनेका निश्चयकर सदाशिव भगवान् शंकरके पास गये तथा उनको सारी घटना सुनाकर उपाय पूछा। शंकरभगवान्ने कहा कि संगीतकी शिक्षा वीणावादिनी भगवती शारदासे लेनेपर यह कार्य पूर्ण हो सकता है। नारदजीने भगवती शारदासे प्रार्थनाकर संगीतकी शिक्षा ग्रहण की। संगीतकलामें पारंगत हो जानेपर वे इसकी परीक्षाके लिये भगवान् विष्णुके पास गये और उनके समक्ष वीणावादन किया। देवर्षि नारदके वीणावादन और संगीतलहरीको सुनकर भगवान् विष्णु द्रवीभूत होकर जलरूपमें परिणत हो गये, जिसे तत्काल ब्रह्माजीने अपने कमण्डलुमें भर लिया। इस प्रकार गंगा भगवान् विष्णुके द्रवीभूत होनेके कारण ब्रह्मद्रवके रूपमें प्रकट हुईं और इसी नामसे प्रसिद्ध हुईं।

ब्रह्मद्रवकी और अन्य कथाएँ भी हैं, बृहद्धर्मपुराणके अनुसार भगवान् विष्णु शिवजीके ताण्डव नृत्य एवं सामगानसे आनन्दमग्नावस्थामें जलमय हो गये। उनके दाहिने पैरके अँगूठेसे जलधार बह निकली। जब ब्रह्माजीने यह देखा तो उन्होंने वह जल कमण्डलुमें भर लिया। वास्तवमें ये सब कथाएँ तो गंगाजीके स्वरूपकी हैं।

भूलोकमें भगवती गंगाके अवतरणकी एक विशेष कथा है। सूर्यवंशमें जहाँ मर्यादापुरुषोत्तम भगवान् रामने जन्म लिया था, उनके पूर्वज थे महाराज सगर। वे चक्रवर्ती सम्राट् थे, उनकी केशिनी और सुमति नामकी दो रानियाँ थीं। केशिनीके पुत्रका नाम असमंजस था और सुमतिके साठ हजार पुत्र हुए। ये सभी उद्दण्ड और दुष्ट प्रकृतिके थे। असमंजसके एक पुत्रका नाम अंशुमान् था, यह अत्यन्त धार्मिक एवं देव-गुरुपूजक था। पुत्रोंसे दुखी होकर महाराज सगरने अपने पौत्र अंशुमान्को अपना उत्तराधिकारी बनाया।

एक बार महाराज सगरने अश्वमेधयज्ञका अनुष्ठान किया, उसके लिये घोड़ा छोड़ा, इन्द्रने अश्वमेधयज्ञके उस घोड़ेको चुराकर पातालमें ले जाकर कपिलमुनिके आश्रममें बाँध दिया। ध्यानावस्थित मुनि इससे अनभिज्ञ थे। सगरके साठ हजार अहंकारी पुत्रोंने पृथ्वीका कोना-कोना छान मारा, परंतु वे घोड़ेको न पा सके। अन्तमें वे खोजते-खोजते कपिलमुनिके आश्रममें जा पहुँचे। वहाँ घोड़ा बँधा देखकर वे क्रोधित हो कपिलमुनिको मारने दौड़े। तपस्यामें

बाधा पड़नेपर मुनिने अपनी आँखें खोलीं, उनके तेजसे सगरके साठ हजार पुत्र तत्काल भस्म हो गये।

गरुड़के द्वारा इस घटनाकी जानकारी मिलनेपर अंशुमान् कपिलमुनिके आश्रममें आये तथा उनकी स्तुति की। उनकी विनयसे प्रसन्न होकर कपिलमुनि बोले— अंशुमन्! घोड़ा ले जाओ और अपने पितामहका यज्ञ सम्पन्न कराओ। ये सगरपुत्र उद्दण्ड, अहंकारी और अधार्मिक थे। इनकी मुक्ति इनकी राखमें गंगाजीके स्पर्शसे ही हो सकती है। अंशुमान्ने घोड़ा ले जाकर अपने पितामह महाराज सगरका यज्ञ पूरा कराया। महाराज सगरके बाद अंशुमान् राजा बने, परंतु उन्हें अपने चाचाओंकी मुक्तिकी चिन्ता बनी रही। कुछ समय बाद अपने पुत्र दिलीपको राज्य सौंपकर वे वनमें चले गये तथा गंगाजीको स्वर्गसे पृथ्वीपर लानेके लिये तपस्या करने लगे और तपस्यामें ही उनका शरीरान्त हो गया। महाराज दिलीपने भी अपने पुत्र भगीरथको राज्यभार देकर स्वयं पिताके मार्गका अनुसरण किया, परंतु उन्हें भी पूर्ण सफलता नहीं मिली, उनका भी तपस्यामें शरीरान्त हो गया, वे भी गंगाजीको पृथ्वीपर न ला सके। महाराज दिलीपके बाद उनके पुत्र भगीरथने घोर तपस्या की। अन्तमें तीन पीढ़ियोंकी इस तपस्यासे प्रसन्न हो पितामह ब्रह्माने भगीरथको दर्शन देकर वर माँगनेको कहा। भगीरथने ब्रह्माजीसे उनके कमण्डलुमें निवास कर रही गंगाजीको पितरोंकी सद्गतिके लिये भूलोकमें भेजनेका वरदान माँगा। ब्रह्माजीने 'तथास्तु' कहकर स्वीकृति प्रदान कर दी। गंगाजीने भगीरथको पृथ्वीपर आनेका वचन प्रदान करते हुए कहा—'मेरा अत्यन्त तीव्र वेग होनेके कारण मैं पृथ्वीको पारकर पाताललोकमें चली जाऊँगी। भगवान् शिवजी ही मेरा वेग रोकनेकी शक्ति-सामर्थ्य रखते हैं। अत: वेग रोकनेके लिये पहले तुम उन्हें प्रसन्न करो।' गंगाजीकी आज्ञासे महाराज भगीरथने भगवान् शिवको प्रसन्न करनेके लिये घोर तप किया। उनके तपसे प्रसन्न होकर भगवान् शंकरने गंगाजीके वेगको रोक लेनेका भगीरथको आश्वासन दिया। शिवजीसे वरदान पाकर जब भगीरथने गंगाजीसे मृत्युलोकमें पदार्पण करनेकी प्रार्थना की तो गंगाजीने अपने वेगसे भगवान् शिवको भी पाताल ले चलनेका विचार किया। शिवजीने गंगाके अभिप्रायको समझ लिया, अतएव जब गंगाजी अत्यन्त प्रबल वेगसे उनके शीशपर गिरने लगीं तब शिवजीने अपनी योगशक्तिसे वेगको रोककर उन्हें जटाजूटमें विलीन कर लिया। चिरकालतक शिवजी वेगकी शान्तिके निमित्त गंगाजीको जटाजूटमें रोके रहे, पृथ्वीपर एक बूँद भी नहीं गिर सकी। इसी कारण गंगाका नाम 'हरमौलिविहारिणी' पड़ा।

जटाजूटमें ही गंगा-विलयके दृश्यसे व्याकुल होकर राजा भगीरथने पुन: शिवस्तुति की। शिवजी प्रसन्न हो गये और उन्होंने अपनी एक जटासे गंगाको धारारूपमें प्रवाहित कर दिया। इस प्रकार गंगाजी पृथ्वीकी ओर चलीं। अब आगे-आगे राजा भगीरथका रथ और पीछे-पीछे गंगाजी थीं। रास्तेमें पड़नेवाले विशाल वृक्षों और पर्वतोंको अपने प्रबल वेगसे गंगाजी बहाकर ले जा रही थीं। उसी मार्गमें उग्रतपा जह्नुमुनिका आश्रम था। वे यज्ञ कर रहे थे। उनके यज्ञकी सम्पूर्ण सामग्री, कमण्डलु, दण्ड आदि गंगाकी वेगवती धारामें बह चले। यह देख ऋषिने गंगाका पान कर लिया। कुछ दूर जानेपर भगीरथने पीछे मुड़कर देखा तो गंगाजीको न देख वे ऋषिके आश्रमपर आकर उनकी वन्दना करने लगे, प्रसन्न हो ऋषिने गंगाजीको अपनी पुत्री बनाकर दाहिने कानसे निकाल दिया।* इसीलिये देवी गंगा 'जाह्नवी' और 'जह्नुनन्दिनी' नामसे भी जानी जाती हैं। भगीरथकी तपस्यासे अवतरित होनेके कारण उन्हें 'भागीरथी' भी कहा जाता है।

इसके बाद भगवती भागीरथी गंगाजी मार्गको हरा-भरा एवं शस्य-श्यामल करते हुए अनेक तीर्थोंमें होती हुई कपिलमुनिके आश्रममें पहुँचीं, जहाँ महाराजा भगीरथके साठ हजार पूर्वज भस्मकी ढेरी बने पड़े थे।

* कुछ स्थलोंपर जह्नुमुनिद्वारा गंगाको अपनी जाँघसे निकालनेकी कथा भी मिलती है।

गंगाजलके स्पर्शसे वे सभी तत्काल दिव्यरूपधारी हो दिव्य लोकोंको चले गये।

आविर्भावकी तिथि

पुराणोंमें गंगाके आविर्भावकी विभिन्न रूपोंमें जैसे विभिन्न कथाएँ आयी हैं, वैसे ही उनके आविर्भावकी तिथि भी अनेक रूपोंमें मान्य है। मुख्य रूपसे ज्येष्ठमासके शुक्लपक्षकी दशमी तिथि 'गंगादशहरा' कहलाती है। यह धरतीपर गंगावतरणकी मुख्य तिथि मानी जाती है। इस दिन विशेष रूपसे गंगास्नान, गंगा-पूजन, दान तथा स्तोत्रपाठ आदि करनेका विशेष महत्त्व है। '**ॐ नमः शिवायै नारायण्यै दशहरायै गङ्गायै नमः॥**'—इस मन्त्रसे गंगाजीका पूजन एवं प्रार्थना करनी चाहिये। इस तिथिको गंगास्नान एवं गंगाके पूजनसे दस प्रकारके पापों* (तीन कायिक, चार वाचिक तथा तीन मानसिक)-का नाश होता है। इसलिये इसे दशहरा कहा गया है—

ज्येष्ठे मासि सिते पक्षे दशमी हस्तसंयुता।
हरते दश पापानि तस्माद् दशहरा स्मृता॥

(ब्रह्मपुराण)

ज्येष्ठमासके समान ही वैशाख शुक्ल तृतीयाको मध्याह्नकालमें भगवती गंगाका आविर्भाव हिमालयके गृहमें पुत्रीरूपमें हुआ था। इस आशयके वृहद्धर्मपुराणमें निम्न श्लोक प्राप्त होते हैं—

तृतीया नाम वैशाखे शुक्ला नाम्नाक्षया तिथिः।
हिमालयगृहे यत्र गङ्गा जाता चतुर्भुजा॥
वैशाखे मासि शुक्लायां तृतीयायां दिनार्धके।
बभूव देवी सा गङ्गा शुक्ला सत्ययुगाकृतिः॥

(वृहद्धर्मपुराण १५।२२, ४२।४)

इसके अनुसार वैशाख शुक्ल तृतीया (अक्षय तृतीया) भी गंगाके आविर्भावकी मान्य तिथि है।

वैशाख शुक्ल सप्तमीको जह्नु-सप्तमी भी कहा जाता है, इसी दिन महर्षि जह्नुकी जंघासे भगवती गंगा प्रवाहित हुई थीं, इसलिये वे जह्नुसुता या जाह्नवी नामसे प्रसिद्ध हुईं। ब्रह्मपुराणके अनुसार वैशाख शुक्ल सप्तमीको गंगा स्नान एवं गंगापूजनका विशेष महत्त्व बताया गया है।

वास्तवमें स्वर्गसे धरापर पतितपावनी गंगाके अवतरणकी कथा बड़ी रोमांचकारी है। इस कथाने देशके पूरे जनमानस तथा प्राचीन एवं अर्वाचीन सम्पूर्ण साहित्यको प्रभावित किया है।

सत्साहित्यमें गंगादर्शन

अपौरुषेय वेदोंसे गंगाका बखान प्रारम्भ होता है, आर्ष स्वर मुखरित हो उठते हैं—'**इमं मे गङ्गे यमुने सरस्वति शुतुद्रि स्तोमम्**.....।' (ऋग्वेद १०।७५।५)

इस मन्त्रमें गंगाका नाम सर्वप्रथम दिया गया है। गंगा आदि इन प्रमुख नदियोंके कारण ही प्राचीन भारतको 'सप्त-सिन्धु' कहा गया। पुराणोंमें गंगाके स्वरूपकी गरिमा एवं भव्यताका विशद वर्णन है। अग्निपुराणमें गंगाको स्वर्गदायिनी कहा गया है—'**गङ्गा सर्वत्र नाकदा।**' नारदपुराणमें एक आख्यान मिलता है, जिसके अनुसार भगवती गंगा मुक्तिदायिनी हैं। पद्मपुराण, मार्कण्डेयपुराण एवं श्रीमद्भागवतमें गंगावतरणका वर्णन विस्तारसे प्राप्त होता है। आदिकवि वाल्मीकिने रामायणमें गंगाजीके सौन्दर्यका बड़ा सुन्दर वर्णन किया है, वाल्मीकिने गंगाष्टककी रचना भी की है—

गाङ्गं वारि मनोहारि मुरारिचरणच्युतम्।
त्रिपुरारिशिरश्चारि पापहारि पुनातु माम्॥

इस श्लोकमें गंगामाताको मनोहारी, मुरारि-चरणामृत कहकर वन्दना की गयी है। महाभारतके अनुसार गंगा शापके कारण शान्तनुकी पत्नी बनती हैं। भीष्ममाता गंगा

---

* अदत्तानामुपादानं हिंसा चैवाविधानतः। परदारोपसेवा च शारीरं त्रिविधं स्मृतम्॥
पारुष्यमनृतं चैव पैशून्यं चापि सर्वशः। असम्बद्धप्रलापश्च वाङ्मयं स्याच्चतुर्विधम्॥
परद्रव्येष्वभिध्यानं मनसानिष्टचिन्तनम्। वितथाभिनिवेशश्च त्रिविधं कर्म मानसम्॥ (मनु० १२।७, ६, ५)

अर्थात् बिना दिये हुए दूसरेकी वस्तु लेना, शास्त्रवर्जित हिंसा करना तथा परस्त्रीगमन करना—तीन प्रकारके शारीरिक (कायिक) पाप हैं। कटु बोलना, झूठ बोलना, परोक्षमें किसीका दोष कहना तथा निष्प्रयोजन बातें करना वाचिक पाप हैं और दूसरेके द्रव्यको अन्यायसे लेनेका विचार करना, मनसे दूसरेका अनिष्ट चिन्तन करना तथा नास्तिक बुद्धि रखना मानसिक पाप हैं।

महाभारतमें देवीरूपमें प्रकट होती हैं, वे भीष्मकी रक्षा करती हैं, इसके साथ ही भीष्मप्रतिज्ञाकी ओर इंगित करते हुए भीष्मको कर्तव्य-पथपर अग्रसर रहनेकी सतत प्रेरणा देती हैं। महाभारतके अनुसार गंगासे बढ़कर कोई तीर्थ नहीं है—**'न गङ्गासमं तीर्थम्।'** श्रीमद्भगवद्गीतामें भी भगवान् कृष्णने गंगाजीको अपना स्वरूप बताया है—**'स्रोतसामस्मि जाह्नवी।'**

महाकवि कालिदासका गंगावर्णन तो अद्वितीय है। रघुवंश एवं मेघदूतमें गंगाके मनमोहक तथा सरस चित्र प्रस्तुत किये गये हैं। नैषध, उत्तररामचरित, मुद्राराक्षस आदि प्रसिद्ध संस्कृत काव्य-नाटक ग्रन्थोंमें भी गंगाके सौन्दर्य एवं महिमाका विशद वर्णन है। संस्कृत-साहित्यमें गंगाकी महिमा एवं प्रार्थनाके अनेक स्तोत्र उपलब्ध हैं। पूज्यपाद शंकराचार्यजीने गंगाजीकी प्रसन्नता प्राप्त करनेके लिये कई गंगाष्टकोंकी रचना की और देवी गंगासे प्रसन्नताहेतु प्रार्थना की—**'तरलतरङ्गे देवि गङ्गे प्रसीद।'** पण्डितराज जगन्नाथका पाण्डित्यपूर्ण कवित्व भी गंगाके चरणोंमें गंगालहरीके रूपमें समर्पित है। संस्कृत-साहित्यमें गंगालहरी श्रेष्ठतम रचना होनेके कारण कविकी अमर कृति बन गयी। इसी प्रकार पद्माकरने पण्डितराजकी भाँति ब्रजभाषामें गंगालहरीकी रचना की। महाकवि जयदेव, सूर, तुलसी, रसखान, मतिराम, मीर, शेख, रत्नाकर, भारतेन्दु आदि हिन्दीके श्रेष्ठ कवियोंने अपने काव्योंमें गंगाकी महिमाका विशिष्ट वर्णनकर स्वयंको पवित्र किया। यहाँतक कि मुसलिम कवि अब्दुल रहीम खानखानाने संस्कृतमें गंगास्तोत्रकी रचनाकर गंगाके प्रति अपार श्रद्धाका परिचय दिया है।

मुसलमान कवियोंकी ही नहीं, मुसलिम शासकोंकी भी गंगामें अटूट श्रद्धा रही है। इन लोगोंने भी गंगाजलको अमृत माना है और अपने निजी प्रयोगमें गंगाजलका ही उपयोग किया है।

गंगाजलका वैशिष्ट्य

गंगाजलका यह विशेष गुण है कि यह पर्युषित अर्थात् बासी नहीं होता। इस जलकी विशेषता है कि इसे किसी पात्रमें दीर्घकालतक रखनेपर भी यह विकृत नहीं होता है। इस जलमें रोगाणुओंको नष्ट करनेकी विशिष्ट क्षमता है। निरन्तर इसके पान करते रहने तथा इसके स्वच्छ जलमें स्नान करनेसे कई प्रकारके असाध्य रोग भी ठीक हो जाते हैं। भैषज्य ग्रन्थोंमें गंगाजलके गुणोंको उल्लिखित करते हुए उसे शीतल, सुस्वादु, स्वच्छ, अत्यन्त रुचिकर, पथ्य, पकानेयोग्य, पाचन-शक्ति बढ़ानेवाला, सर्वपापहारी, प्यासको शान्त करनेवाला तथा मोहनाशक, क्षुधा एवं बुद्धिवर्धक बताया गया है।* शरीरके जर्जर तथा व्याधिग्रस्त होनेकी स्थितिमें इस जलकी ओषधिरूपमें मान्यता है—

शरीरे जर्जरीभूते व्याधिग्रस्ते कलेवरे।
औषधं जाह्नवीतोयं वैद्यो नारायणो हरिः॥

अर्थात् गंगाका जल ओषधिस्वरूप तथा साक्षात् नारायण ही वैद्यका रूप हैं।

पतितपावनी गंगा

भवके जीवोंको भवसागरसे पार करनेकी अद्भुत शक्ति भी गंगामें भरी पड़ी है। तापत्रयविनाशिनी गंगा मोक्षदायिनी भी हैं, इनके दर्शन, स्पर्श, पान, नामोच्चारण तथा स्मरणमात्रसे ही प्राणी सर्वपापोंसे तत्काल मुक्त हो जाते हैं। दैहिक, दैविक और भौतिक ताप तत्क्षण उपशमको प्राप्त होते हैं—

दर्शनात् स्पर्शनात् पानात् तथा गङ्गेति कीर्तनात्।
स्मरणादेव गङ्गायाः सद्यः पापात् प्रमुच्यते॥

दुराचार, असत्यभाषण, अभक्ष्य-भक्षण, अस्पृश्य-स्पर्शसे होनेवाले तथा ज्ञाताज्ञात-अवस्थामें किये गये समस्त पातक भी गंगास्नानमात्रसे तत्काल नष्ट हो जाते हैं—

अनाचारोद्भवं पापमवाच्यादिकृतं च यत्।
अभक्ष्यभक्षजं दोषं दोषमस्पर्शजं तथा॥
ज्ञाताज्ञातकृतं नित्यमिन्द्रियैर्जनितं च यत्।
तत्सर्वं नाशमायाति गङ्गास्नानेन तत्क्षणात्॥

(ब्रह्मपुराण)

* शीतं स्वादु स्वच्छमत्यन्तरूच्यं पथ्यं पाक्यं पाचनं पापहारि। तृष्णामोहध्वंसनं दीपनं च प्रज्ञां धत्ते वारि भागीरथीयम्॥

गंगा-सेवनकी शास्त्रीय विधि एवं गंगामें निषिद्ध कर्म

अपने शास्त्रोंमें गंगा-सेवनकी भी विधिका वर्णन है। जो शास्त्रोंकी विधिसे गंगाका सेवन करता है, उसे ही सम्पूर्ण लाभ मिलते हैं।

जो मनुष्य अपनी सद्गति चाहता है, उसे पाप-बुद्धिका आश्रय छोड़कर गंगामें अवगाहन करना चाहिये—

पापबुद्धिं परित्यज्य गङ्गायां लोकमातरि।
स्नानं कुरुत हे लोका यदि सद्गतिमिच्छथ॥

(पद्मपुराण ७।९।१५७)

शास्त्रोंमें एक सिद्धान्त है कि **'देवो भूत्वा देवं यजेत्'** 'देवता बनकर ही देवताकी पूजा करनी चाहिये।' इसका तात्पर्य है कि आसुरी-वृत्तियोंसे दूर और दैवीगुणोंसे युक्त होकर जो गंगाका सेवन करता है, उसे ही पूरा लाभ मिलता है। अपने शास्त्रोंमें तो यहाँतक लिखा है कि गंगास्नानके लिये जाते समय असत्य-भाषण, पाखण्ड, संग, कलह, परनिन्दा, लोभ, गर्व, क्रोध और मत्सर आदि मनोमालिन्यका पूर्णरूपसे त्याग करना चाहिये। स्नान करनेके समय यह भावना बननी चाहिये कि हम साक्षात् नारायणके चरण-कमलोंसे निःसृत अमृतमय ब्रह्मद्रवमें अवगाहन कर रहे हैं। इस प्रकारकी निर्मल भावनासे समृद्ध होकर संयत स्नान करनेवाला व्यक्ति गंगामें देहादि भी नहीं मलता, अपने परिधानका जल भी गंगामें नहीं डालता। ऋषि-महर्षियोंने तो स्पष्ट निर्देश किया है कि गंगाके तटको मूत्र, पुरीष, श्लेष्मा, निष्ठीवन, दूषिका, अश्रु अथवा मलसे दूषित करनेवाला पातकी होता है; यहाँतक कि दन्त-धावन तथा वस्त्र-प्रक्षालन आदि भी वर्जित हैं—

मूत्रं वाथ पुरीषं वा गङ्गातीरे करोति यः।
न दृष्टा निष्कृतिस्तस्य कल्पकोटिशतैरपि॥
श्लेष्माणं वापि निष्ठीवं दूषिकां वाऽश्रु वा मलम्।
गङ्गातीरे त्यजेद् यस्तु स नूनं नारकी भवेत्॥
परिधेयाम्बराम्बूनि गङ्गास्रोतसि न त्यजेत्॥
न दन्तधावनं कुर्याद् गङ्गागर्भे विचक्षणः।
कुर्याच्चेन्मोहतः पुण्यं न गङ्गास्नानजं लभेत्॥

(पद्मपुराण ७।८।८-९, ७।९।४४-४५)

गंगाजीके सन्निकट पहुँचनेपर स्नानार्थीको अपने मनमें यह भाव बनाना चाहिये—'मैंने जन्म-जन्मान्तरमें जो थोड़े या अधिक पाप किये हैं, वे भगवती गंगाके प्रसादसे निश्चित रूपसे नष्ट हो जायँगे।'

जन्मजन्मार्जितं पापं स्वल्पं वा यदि वा बहु।
गङ्गादेवीप्रसादेन सर्वं मे यास्यति क्षयम्॥

इसके साथ ही गंगामाताका दर्शनकर निम्नोक्त मन्त्रका उच्चारण करना चाहिये—

अद्य मे सफलं जन्म जीवितं च सुजीवितम्।
साक्षाद् ब्रह्मस्वरूपां त्वामपश्यमिति चक्षुषा॥

'हे देवि! आज मेरा जन्म लेना सफल हो गया, मेरा जीवन सार्थक हो गया; क्योंकि मैंने आज ब्रह्मस्वरूपिणी आपका अपने नेत्रोंसे साक्षात् दर्शन कर लिया।' इस प्रकार प्रार्थना करते हुए भक्तिभावसमन्वित होकर भगवती जाह्नवीको भूमिपर दण्डवत् रूपमें प्रणाम करना चाहिये। तदनन्तर गंगास्नानका संकल्प मानसिक अथवा वाचिक रूपसे कर लेना चाहिये। पुनः निम्नरूपमें गंगाजीकी प्रार्थना करे—

विष्णुपादाब्जसम्भूते गङ्गे त्रिपथगामिनि।
ब्रह्मद्रवेति विख्याते पापं मे हर जाह्नवि॥

भगवान् विष्णुके चरणारविन्दसे निःसृत होकर ब्रह्मद्रवके रूपमें विख्यात त्रिपथगामिनी भगवती गंगा मेरे पापोंको हरण करनेकी कृपा करें।

गंगाजलको पैरोंद्वारा स्पर्श करनेकी विवशताके लिये निम्न मन्त्रसे क्षमा-प्रार्थना भी करे—

गङ्गे देवि जगद्धात्रि पादाभ्यां सलिलं तव।
स्पृशामीत्यपराधं मे प्रसन्ना क्षन्तुमर्हसि॥

हे जगद्धात्रि देवि गंगे! मेरे पैरोंसे आपके पावन जलको स्पर्श करनेका जो अपराध हो रहा है, उसे आप प्रसन्नतापूर्वक क्षमा कर दें।

गंगारजका माहात्म्य

गंगाके रज (मिट्टी)-की भी बड़ी महिमा है, इसके प्रयोगसे शरीरके चर्मसम्बन्धी कई रोग समाप्त होते हैं तथा शरीरमें एक प्रकारकी आभा—स्वच्छताका अनुभव होता है। जो मनुष्य गंगाके तीरकी मिट्टी अपने मस्तकपर तिलकके रूपमें लगाता है, वह अज्ञानान्धकारका नाश करनेके लिये सूर्यके समान निर्मल स्वरूप धारण करता है—

जाह्नवीतीरसम्भूतां मृदं मूर्ध्ना बिभर्ति यः।
बिभर्ति रूपं सोऽर्कस्य तमोनाशाय निर्मलम्॥

(महाभारत)

गंगास्नानके पूर्व गंगारजको निम्नोक्त मन्त्रद्वारा प्रार्थना करते हुए अपने माथे तथा शरीरपर लेपनकर स्नान करना चाहिये—

अश्वक्रान्ते रथक्रान्ते विष्णुक्रान्ते वसुन्धरे।
मृत्तिके हर मे पापं यन्मया दुष्कृतं कृतम्॥

गंगास्नानकी विधि

स्नानकी भी बड़ी सूक्ष्म विधि है। स्नान करते समय शरीरको बिना मले मूसलकी तरह गंगामें अवगाहन करे और यह भावना बनाये कि अमृतरूपमें ब्रह्मद्रवके द्वारा परमात्मप्रभुसे साक्षात् हार्दिक सम्मिलन प्राप्त हो रहा है। गंगास्नानके अनन्तर शरीर पोंछना नहीं चाहिये। शरीरसे जो जल गिरता है, वह अन्य योनियोंमें गये हुए पितरोंको प्राप्त होता है। शरीर पोंछनेपर वे पितर उस जलसे वंचित हो जानेके कारण दुखी होकर शाप देते हैं। अस्वस्थता आदि किसी कारणवश तत्काल शरीर पोंछना आवश्यक हो तो गीले गमछेसे ही पोंछना चाहिये। उससे निचोड़ा हुआ जल भी पितरोंको प्राप्त होता है।

सामान्यतः सब लोगोंको प्रतिदिन गंगास्नानका अवसर प्राप्त नहीं हो पाता। अपने शास्त्रोंमें यह भी व्यवस्था है कि पतितपावनी गंगाका स्मरण करते हुए उनके नामोंका उच्चारण कर लिया जाय तो उसे गंगास्नानका फल प्राप्त हो जाता है। आचारप्रकाश नामक ग्रन्थमें गंगाजीके द्वादश नामोंकी चर्चा की गयी है, जिसका किसी भी स्थानमें स्नानके समय नित्यप्रति स्मरण करनेसे उस जलमें गंगाजीका वास हो जाता है—

नन्दिनी नलिनी सीता मालती च महापगा।
विष्णुपादाब्जसम्भूता गङ्गा त्रिपथगामिनी॥
भागीरथी भोगवती जाह्नवी त्रिदशेश्वरी।
द्वादशैतानि नामानि यत्र यत्र जलाशये॥
स्नानोद्यतः स्मरेन्नित्यं तत्र तत्र वसाम्यहम्॥

(आचारप्रकाश)

गंगातट, गंगागर्भ, गंगातीर तथा गंगाक्षेत्र

गंगाकी तो इतनी महिमा है कि गंगाके सन्निकट शरीर-त्याग होनेपर साक्षात् वैकुण्ठकी प्राप्ति होती है। अपने शास्त्रोंमें गंगाक्षेत्रके चार विभाग माने गये हैं—गंगातट, गंगागर्भ, गंगातीर तथा गंगाक्षेत्र। प्रवाहसे लेकर चार हाथकी भूमि गंगातट होती है। गंगाप्रवाहसे १०० हाथतक गंगागर्भ माना गया है। गंगागर्भसे १५० हाथतक गंगातीर माना जाता है। गंगातीरसे २ कोसतकका स्थान गंगाक्षेत्र कहा गया है।

गंगाक्षेत्रमें करणीय और वर्जित कृत्य

गंगाके सन्निकट ये क्षेत्र विशेष पुण्यप्रद हैं। यहाँ दीक्षा, देवपूजा, गायत्री आदि जप, श्राद्ध, तर्पण, परोपकार, दान, स्तोत्रपाठ आदि पुण्यकर्म विशेष फलदायक हैं। ये धर्म-कर्म अक्षय हो जाते हैं—

गङ्गायां धर्मकर्माणि क्रियन्ते यानि कानि च।
अक्षयानि भवन्त्यस्य तानि सर्वाणि जैमिने॥

(पद्मपुराण)

इसके साथ ही इस क्षेत्रमें हिंसा, द्वेष, कलह, असत्यभाषण, प्रतिग्रह, अशास्त्रीय वचन, परान्न-भोजन, परद्रव्यग्रहण, शोक-मोह, नास्तिकता, भिक्षा, लोभ-लालच, पापवृत्ति, चपलता-परिहास आदि पापकर्मोंका फल भी अत्यन्त भयावह होता है। अतः विशेषकर गंगाके सन्निकट रहनेवाले व्यक्तिको निरन्तर विशेष सावधान रहनेकी आवश्यकता है।

गंगापान तथा नामस्मरणकी विशेष महिमा

जन्म-मरणके बन्धनसे मुक्त होनेके लिये गंगाकी विशेष महिमा है। अन्तिम समयमें गंगाका एक बिन्दु जल पीनेपर भी परमपदकी प्राप्ति होती है—

गंगाम्भः शीकरं यस्तु सम्मितं सर्षपस्य च।
प्राप्नोति मृत्युकाले तु स गच्छेत् परमं पदम्॥

(पद्मपुराण क्रियायोगसारखण्ड ७१।७२)

गंगाक्षेत्रमें शरीर-विसर्जनका तो विशेष महत्त्व है ही, परंतु यदि किसी कारणवश गंगाका सान्निध्य न प्राप्त हो सके तो गंगाकी इतनी महिमा है कि सौ योजन दूरसे भी मृत्युशय्यापर पड़ा व्यक्ति पतितपावनी गंगाका स्मरण करते हुए गंगाका नाम उच्चारण कर ले तो वह सम्पूर्ण पापोंसे मुक्त होकर विष्णुलोकमें पहुँच जाता है—

गङ्गा गङ्गेति यो ब्रूयाद् योजनानां शतैरपि।
मुच्यते सर्वपापेभ्यो विष्णुलोकं स गच्छति॥

दूर देशमें मरनेवाले व्यक्तिकी अस्थियोंका विसर्जन गंगामें कर दिया जाय तो उस जीवको उत्तम लोक प्राप्त होते हैं। इसके लिये काशी, प्रयाग और हरिद्वार आदि स्थान विशेष प्रशस्त एवं महत्त्वपूर्ण माने गये हैं।

मनुष्यकी हड्डी जितने समयतक गंगाजीके जलमें पड़ी रहती है, उतने हजार वर्षोंतक वह स्वर्गलोकमें प्रतिष्ठित होता है—

यावदस्थि मनुष्यस्य गङ्गातोयेषु तिष्ठति।
तावद्वर्षसहस्राणि स्वर्गलोके महीयते॥

(महाभारत)

गंगाके सन्निकट तर्पण-श्राद्ध करनेपर पितरोंको अत्यधिक प्रसन्नता होती है और वे विशेष रूपमें आशीर्वाद प्रदान करते हैं।

पितरोंका उद्‌गार

व्यासजी बताते हैं कि गंगास्नानके लिये यात्रा करनेवाले अपने पुत्रको देखकर **स्वर्गमें स्थित** उसके पितर प्रसन्नतापूर्वक उसकी प्रशंसा करते हुए परस्पर वार्तालाप करते हैं कि हम सबने सद्‌गति प्राप्तिके लिये पूर्वकालमें जो पुण्यकर्म किये थे, उनके फल निश्चय ही अब अक्षय हो जायँगे; क्योंकि हमारे कुलमें ऐसा पुत्र हुआ है, जो गंगाजीमें परम आस्थावान् है। इस सत्पुत्रके द्वारा गंगाजलसे तर्पित हुए हम पितृगण निश्चय ही उस परम धामको प्राप्त करेंगे, जो देवताओंके लिये भी दुर्लभ है। आज भगवती गंगाकी सन्निधिमें हमारे निमित्त यह सत्पुत्र विविध पदार्थों (दुग्ध, जल, फल, अन्न, वस्त्र, शय्या, ताम्बूल, वाहन आदि)-का दान करेगा, जिससे सर्वदा हमें इन पदार्थोंकी प्राप्ति होती रहेगी। इसी प्रकार अनेक प्रकारके दु:खोंसे संतप्त, **नरकमें स्थित** पितर भी गंगास्नानके लिये जाते हुए अपने पुत्रको देखकर परस्पर चर्चा करते हैं कि हम लोगोंने नारकीय यातना देनेवाले जो कर्म किये थे, वे सभी आज इस सत्पुत्रके कृपाप्रसादसे विनष्ट हो जायँगे तथा हम सभी पितर नरकोंकी असह्य यातनाओंसे मुक्त होकर पुत्रके अनुभावसे परमगतिको प्राप्त करेंगे।*

गंगाके प्रति हमारा दायित्व

आध्यात्मिकरूपमें गंगा जितनी पवित्र, निर्मल, स्वच्छ और पतितपावनी हैं, अपने ऋषि-महर्षियोंने भौतिकरूपसे भी गंगाको उतना ही स्वच्छ, निर्मल और

* स्वर्गस्थाः पितरः सर्वे गच्छन्तं जाह्नवीतटे।
सन्दृश्य हृष्टाः शंसन्ति वदन्त इति जैमिने। यत्पुण्यं कृतमस्माभिः सद्‌गतिप्राप्तये पुरा॥
भविष्यत्यक्षयं तच्च यतः पुत्रोऽयमीदृशः। अनेन गाङ्गैः सलिलैर्वयं सम्प्रति तर्पिताः॥
यास्यामः परमं धाम दुर्लभं यत्सुरैरपि। गङ्गायां यानि द्रव्याणि दास्यत्यस्माकमात्मजः॥
अस्मभ्यं तानि सर्वाणि भविष्यन्त्यक्षयाणि वै। नरकस्थाश्च पितरः सर्वदु:खसमन्विताः॥
वदन्तीति सुतं दृष्ट्वा गच्छन्तं जाह्नवीतटम्। कृतानि यानि पापानि नरकक्लेशदानि वै॥
यास्यन्ति संक्षयं तानि पुत्रस्याऽपि प्रसादतः। विमुक्ता नरकक्लेशैर्वयं सर्वे सुदु:सहैः॥
अथ पुत्रप्रसादेन यास्यामः परमां गतिम्। (पद्मपुराण)

पवित्र रखनेका कर्तव्य-निर्देश किया है।

आजकल कितने लोग गंगास्नान तो करते हैं, पर गंगाको स्वच्छ, निर्मल और पवित्र रखनेका कर्तव्य-पालन नहीं करते। कितने लोग मल-मूत्र, श्लेष्मा, निष्ठीवनका निक्षेप भी गंगामें करनेमें संकोच नहीं करते। समष्टिरूपसे आज गंगामें प्रदूषणकी एक बहुत बड़ी समस्या है, जिसके लिये जनताके साथ-साथ सरकार भी कम जिम्मेदार नहीं है।

गंगामें प्रदूषणका मूल कारण हमारी भोगवादी प्रवृत्ति ही है। भोगोंके अधिकाधिक साधन जुटाना ही आज मनुष्यका लक्ष्य बन गया है। वास्तविक आनन्दकी स्थिति तो वहाँ है, जहाँ हम सुख-शान्ति और समृद्धिको प्राप्त करते हुए सन्तोषकी ओर बढ़ते हैं। पर आज तो मानव क्षणिक समृद्धिके लिये अपने सुख और शान्तिका बलिदान कर देता है। इसी रूपमें अपने तुच्छ स्वार्थकी पूर्तिके लिये मानव अमृतरूप गंगाजलपर कृत्रिम प्रहार करनेमें संकोच नहीं करता। औद्योगिक संस्थानों एवं सरकारद्वारा गंगाकी नैसर्गिक धाराको नहर और बाँध बाँधकर मोड़नेका प्रयास किया जाता है। दूसरी तरफ शहरोंका सीवर, गन्दे नाले और उद्योगोंसे निकलनेवाले घातक रसायन सम्मिलित रूपसे उनके अस्तित्वको मिटानेके लिये तत्पर हैं।

यद्यपि वर्तमान सरकार गंगाके प्रदूषणके निवारणके लिये प्रयासरत है और इसके लिये योजनाएँ भी बनायी जा रही हैं, परंतु यह कार्य कबतक पूरा होगा और सरकारको इसमें कितनी सफलता मिलेगी—यह कहा नहीं जा सकता। सरकारको पिछली योजनाओंमें हुई भूलोंसे सीख लेते हुए पर्यावरणविदों, गंगासंरक्षणके कार्यसे जुड़े व्यक्तियों तथा संगठनोंसे व्यापक विचार-विमर्श करते हुए व्यावहारिक योजनाएँ बनानी चाहिये। इसके साथ ही देशकी जनताको अपना कर्तव्य समझकर गंगाको मातृवत् समादर देते हुए उन्हें संरक्षित तथा प्रदूषणमुक्त करनेहेतु पूर्ण सहयोग करना चाहिये।

पॉलीथीन, प्लास्टिकके दोने-प्लेटें, विभिन्न संस्कारोंके निमित्तसे उतारे गये केश, पुष्प, निष्प्रयोज्य पदार्थ, विभिन्न उत्सवोंके समय निर्मित होनेवाली प्लास्टर ऑफ पेरिस एवं केमिकल रंगोंसे रँगी मूर्तियोंका विसर्जन, अधजले शवोंका प्रवाह तथा डीजल इंजनसे चलनेवाली मोटर बोटोंका परिचालन पूर्णतः प्रतिबन्धित करते हुए; कपड़े धोने तथा स्नानके दौरान शैम्पू, साबुन, तेल-उबटन आदिके प्रयोगपर रोक लगायी जाय। गंगाके समीपवर्ती क्षेत्रोंमें स्थापित फैक्ट्रियोंको यथासम्भव अन्यत्र स्थापित किया जाय। सीवर, गन्दे नालों तथा कारखानोंसे निकलनेवाले हानिकारक द्रव्यको किसी भी स्थितिमें गंगामें न गिरने दिया जाय। औसत जल-प्रवाह निरन्तर प्रवाहित होते रहनेकी व्यवस्था सुनिश्चित की जाय। 'गंगा प्रिजरवेशन एक्ट' सरकारद्वारा बनाया जाय तथा सख्तीसे उसका पालन कराया जाय। इसके साथ ही गंगामें किसी भी प्रकारके प्रदूषण फैलानेको अक्षम्य अपराधकी श्रेणीमें सम्मलित करते हुए, ऐसे कृत्योंमें संलिप्त पाये जानेपर कठोर दण्डके प्रावधान हों।

बिजली-उत्पादनके लिये गंगामें बड़े-बड़े बाँध बाँधना सर्वथा अनुचित है। इन बाँधोंके स्थानपर वैकल्पिक ऊर्जा स्रोतों—सौर ऊर्जा, बायो गैस, पवन ऊर्जाको प्राप्त करनेके लिये अनुसन्धान होना चाहिये। भारतके अधिकांश हिस्सोंमें पूरे वर्ष सूर्यदेवकी कृपा बनी रहती है, जिससे यहाँ सौर ऊर्जाको उत्पादित किये जानेकी बहुत गुंजाइश है। गंगाके अस्तित्वकी उपेक्षाकर केवल विद्युत्-उत्पादनकी ओर ध्यान केन्द्रित करना कितना उचित है? वास्तविक तथ्य तो यह है कि विद्युत्के लिये अन्य विकल्प हो सकते हैं, पर गंगाका कोई विकल्प नहीं हो सकता।

गंगाजलका वैज्ञानिक परीक्षण

भौतिक विज्ञानके परीक्षणसे भी यह बात सिद्ध हो चुकी है कि गंगाजल एक अद्भुत वस्तु है और शुद्ध गंगाजल पाना बहुत बड़ा सौभाग्य है। अभी कुछ समय पूर्व ही 'यूनेस्को' से आये एक वैज्ञानिक दलने हरिद्वारके निकट गंगाके पानीका परीक्षण करके यह बताया कि जिस स्थानमें पानीकी धारामें मुर्दे, हड्डियाँ आदि दूषित वस्तुएँ बह रही हैं, वहीं कुछ फुट नीचेका गंगाजल पूर्ण शुद्ध है। मैकग्रिल यूनीवर्सिटीके एक प्रोफेसरने प्रायः तीन दशक पूर्व अपने

प्रयोगोंसे यह बताया था कि गंगाजलमें हैजेके कीटाणु ३-४ घंटेमें स्वतः समाप्त हो जाते हैं। इसी तरह ब्रिटिश मासिक पत्रिका 'गुडहेल्थ' ने लिखा है कि टेम्स नदीका रखा हुआ पानी दूषित हो गया, पर गंगाजल वैसा ही ताजा निकला। एक यूरोपियन फिजीशियन हाकिंसने गंगाके पानीमें अनेक दोषनाशक तत्त्वोंकी विवेचना की है तथा यह प्रमाणित किया है कि गंगामें ऐसे बैक्टीरिया और रसायन होते हैं, जो उसमें मिलनेवाले प्रदूषण और रोगकारी तत्त्वोंको व्यर्थ कर देते हैं। इसमें पर्याप्त आक्सीजन भी है। जो व्यक्ति प्रतिदिन नियमपूर्वक गंगास्नान करता है, वह प्रायः कभी अस्वस्थ नहीं होता। यह एक अनुभवकी बात है, जिसका प्रयोग कोई भी करके देख सकता है।

अध्यात्मपथ और गंगा

भौतिक जगत्‌के लिये गंगा एक भौतिक साधन हो सकती हैं, पर इस देशकी संततिके लिये ये एक महान् आध्यात्मिक साधन हैं। गंगापर आश्रित मनुष्य केवल भौतिक रह ही नहीं सकता। उसकी बुद्धि, विचार, विवेक ऊर्ध्वगामी बनेंगे। उसमें वैश्विक भावना प्रविष्ट होगी। गंगोदक-सेवनसे उसकी भावनाएँ प्रासादिक बनेंगी। इसलिये कोटि-कोटि भारतीयोंके लिये गंगा माता हैं, धरित्रीके समान पोषक और अपकर्मोंसे ऊपर उठानेवाली एवं परमेश्वररूपमें कैवल्य एवं मोक्षप्रदात्री भी हैं।

सन्तप्रवर गोस्वामी तुलसीदासजीने कहा है कि माँ गंगामें ही यह क्षमता है, जो सबका हित करती हैं। इसीलिये गोस्वामीजी महाराजने सबका हित करनेवाली रामकथाकी सुरसरि भगवती भागीरथीसे ही उपमा प्रदान की—***'सुरसरि सम सब कहँ हित होई।'***

अपने शास्त्रोंमें गंगाको विष्णुका अमृतद्रव और शिवकी साक्षात् तोयरूपा मूर्ति बताया गया है—

ममैव सा परा मूर्तिस्तोयरूपा शिवात्मिका।
ब्रह्माण्डानामनेकेषामाधारः प्रकृतिः परा॥

(स्क०पु० ४। २७। ७)

गंगाको कई नामोंसे पुकारा जाता है। ये विष्णुके चरणसे निकली हैं इसलिये 'विष्णुपदी', भगीरथकी तपस्यासे उतरी हैं इसलिये 'भागीरथी', जह्नुकी कृपासे मुक्त हुई हैं इसलिये 'जाह्नवी' और पृथ्वीपर उतरी हैं इसलिये 'गंगा' कहलाती हैं। महाभारतके वनपर्वमें कहा गया है कि गंगाके सात प्रकार हैं—'**एषा गङ्गा सप्तविधा**'। मत्स्यपुराण और वायुपुराणमें इनकी सात धाराएँ बतायी गयी हैं। वाल्मीकिरामायणमें इन्हें स्वर्ग, मर्त्य और पाताल तीनों लोकोंमें बहनेवाली होनेके कारण 'त्रिपथगा' और विष्णुधर्मोत्तरपुराणमें 'त्रैलोक्यव्यापिनी' कहा गया है। इसी प्रकार विष्णुके चरणसे निकलने, ब्रह्माके कमण्डलुमें रहने और शिवकी जटामें प्रवाहित होनेसे ये गंगा 'त्रिपथगा' हुईं, इसीलिये इनका नाम 'सुरसरि' हुआ।

हम भारतवासियोंका यह पुनीत कर्तव्य है कि आध्यात्मिकरूपसे परमपवित्र, पतितपावनी, कलिमल-हारिणी, जगदुद्धारिणी माँ गंगाके चरणकमलोंपर श्रद्धावनत होकर अपने प्रमाद और त्रुटियोंके लिये क्षमायाचना करते हुए, भविष्यमें गंगाको स्थूल-प्रदूषणसे मुक्त करनेके लिये पूर्ण कटिबद्ध हो जायँ। समष्टिरूपमें इसके लिये एक भावनात्मक आन्दोलन भी चलाना चाहिये। किसी भाँतिकी गन्दगी किसी तरहसे भी गंगामें प्रवाहित न हो सके, इसके लिये पूर्ण प्रयत्नशील होना चाहिये। आज देशके प्रत्येक नागरिक, समाज और सरकारका यह उत्तरदायित्व है कि जलको प्रदूषित न होने दें, ताकि भविष्यमें हम स्वच्छ गंगाजलके लिये कहीं तरस न जायँ। तभी इसका समाधान हो सकेगा।

अन्तमें हम माँ गंगासे यह प्रार्थना करते हैं कि वे हमारे पापोंका विनाशकर हमें शक्ति और प्रेरणा प्रदान करें—

विष्णुपादाब्जसम्भूते गङ्गे त्रिपथगामिनि।
ब्रह्मद्रवेति विख्याते पापं मे हर जाह्नवि॥

माँ गंगे! भगवान् विष्णुके चरणोंसे उद्भूत होनेके कारण आप अत्यन्त पवित्र हैं, तीनों लोकोंमें गमन करनेके कारण त्रिपथगामिनी कहलाती हैं; साथ ही ब्रह्मद्रवके नामसे भी विख्यात हैं। अतः हे माँ! हमारे सम्पूर्ण पापोंका विनाशकर रक्षा करें।

—राधेश्याम खेमका

॥ श्रीहरिः ॥

'कल्याण' का उद्देश्य और इसके नियम

भक्ति, ज्ञान, वैराग्य, धर्म और सदाचारसमन्वित लेखोंद्वारा जन-जनको कल्याण-पथ (आत्मोद्धारके सुमार्ग)-पर अग्रसरित करनेकी प्रेरणा देना इसका एकमात्र उद्देश्य है।

नियम—भगवद्भक्ति, ज्ञान, वैराग्यादि प्रेरणाप्रद एवं कल्याण-मार्गमें सहायक अध्यात्मविषयक, व्यक्तिगत आक्षेपरहित लेखोंके अतिरिक्त अन्य विषयोंके लेख 'कल्याण' में प्रकाशित नहीं किये जाते। लेखोंको घटाने-बढ़ाने और छापने-न-छापनेका अधिकार सम्पादकको है। अमुद्रित लेख बिना माँगे लौटाये नहीं जाते। लेखोंमें प्रकाशित मतके लिये सम्पादक उत्तरदायी नहीं है।

१-**'कल्याण' का नया वर्ष जनवरीसे आरम्भ होकर दिसम्बरतक रहता है, अतः ग्राहक जनवरीसे ही बनाये जाते हैं। वर्षके मध्यमें बननेवाले ग्राहकोंको जनवरीका विशेषाङ्क एवं अन्य उपलब्ध मासिक अङ्क दिये जाते हैं।**

२-**वार्षिक सदस्यता-शुल्क**—भारतमें ₹२०० (सजिल्द ₹२२०), विदेशमें हवाई डाकसे भेजनेके लिये US$ 45 (₹ २७००) (चेक कलेक्शनके लिये US$ 6 अतिरिक्त)।

पंचवर्षीय शुल्क—भारतमें ₹१००० (सजिल्द ₹११००), विदेशमें हवाई डाकसे भेजनेके लिये US$ 225 (₹१३५००) (चेक कलेक्शनके लिये US$ 6 अतिरिक्त)।

डाकखर्च आदिमें अप्रत्याशित वृद्धि होनेपर पंचवर्षीय ग्राहकोंद्वारा अतिरिक्त राशि भी देय हो सकती है।

३-समयसे सदस्यता-शुल्क प्राप्त न होनेपर आगामी वर्षका विशेषाङ्क वी०पी०पी०से भेजा जाता है। इसपर डाकशुल्कका ₹१० अतिरिक्त देय होता है।

४-जनवरीका विशेषाङ्क (वर्षका प्रथम अङ्क) रजिस्ट्री / वी०पी०पी०से तथा फरवरीसे दिसम्बरतकके अङ्क प्रतिमासके प्रथम सप्ताहतक साधारण डाकसे भेजे जाते हैं।

५-पत्र-व्यवहारमें 'ग्राहक-संख्या' अवश्य लिखी जानी चाहिये और पता बदलनेकी सूचनामें **ग्राहक-संख्या, पिनकोडसहित पुराना और नया पता लिखना चाहिये।**

६-**'कल्याण' में व्यवसायियोंके विज्ञापन किसी भी स्थितिमें प्रकाशित नहीं किये जाते।**

व्यवस्थापक—**'कल्याण', पत्रालय—गीताप्रेस—२७३००५ (गोरखपुर)**

गीताप्रेसके दो महत्त्वपूर्ण प्रकाशन

महाभारत—सटीक [छः खण्डोंमें सेट] (कोड 728)—महाभारत हिन्दू-संस्कृतिका महान् ग्रन्थ है। इसे पंचम वेद भी कहा जाता है। यह भारतीय धर्म-दर्शनके गूढ़ रहस्योंका अनुपम भण्डार है। सबसे महत्त्वपूर्ण बात यह है कि इसमें भगवान् श्रीकृष्णके गुण-गौरवका गान, उपनिषदोंका सार तथा इतिहास-पुराणोंका आशय है। मूल्य ₹ १९५०

मानस-पीयूष [सात खण्डोंमें सेट] (कोड 86)—महात्मा श्रीअञ्जनीनन्दन शरणके द्वारा सम्पादित यह ग्रन्थ श्रीरामचरितमानसकी सबसे बृहत् टीका है। यह महान् ग्रन्थ ख्यातिलब्ध रामायणियों, उत्कृष्ट विचारको, तपोनिष्ठ महात्माओं एवं आधुनिक मानसविज्ञोंकी एक साथ व्याख्याओंका अनुपम संग्रह है। मूल्य ₹ २१००

मानस-पीयूष-परिशिष्ट (कोड 1935) मूल्य ₹ ७५

प्र० ति० २१-१२-२०१५
रजि० समाचारपत्र—रजि०नं० २३०८/५७ पंजीकृत संख्या—NP/GR–13/2014–2016
LICENSED TO POST WITHOUT PRE-PAYMENT | LICENCE No. WPP/GR-03/2014–2016

गंगाजीमें वर्ज्य शास्त्रोक्त कर्म

गङ्गां पुण्यजलां प्राप्य चतुर्दश विवर्जयेत्। शौचमाचमनं केशं निर्माल्यं मलघर्षणम्॥
गात्रसंवाहनं क्रीडां प्रतिग्रहमथो रतिम्। अन्यतीर्थरतिं चैव अन्यतीर्थप्रशंसनम्॥
वस्त्रत्यागमथाघातं संतारं च विशेषतः। ×××परिधेयाम्बराम्बूनि गङ्गास्त्रोतसि न त्यजेत्॥
न दन्तधावनं कुर्याद्गङ्गागर्भे विचक्षणः। कुर्याच्चेन्मोहतः पुण्यं न गङ्गास्नानजं लभेत्॥
प्रभातेऽन्यत्र तां कृत्वा दन्तकाष्ठादिकक्रियाम्। रात्रिवासं परित्यज्य गङ्गायां स्नानमाचरेत्॥
बाह्यभूमिमगत्वा यो गङ्गायां स्नानमाचरेत्। गङ्गास्नानफलं सोऽपि सम्पूर्णं च लभेन्न हि॥
मूत्रं वाऽथ पुरीषं वा गङ्गातीरे करोति यः। न दृष्टा निष्कृतिस्तस्य कल्पकोटिशतैरपि॥
श्लेष्माणं वाऽपि निष्ठीवं दूषिकाम्वाऽश्रु वा मलम्। गङ्गातीरे त्यजेद्यस्तु स नूनं नारकी भवेत्॥
उच्छिष्टं कफकञ्चैव गङ्गागर्भे च यस्त्यजेत्। स याति नरकं घोरं ब्रह्महत्यां च विन्दति॥
गङ्गारोधसि यः पापं कुरुते मूढधीर्नरः। तदक्षयं भवेन्नूनं नान्यतीर्थेषु शाम्यति॥
अन्यतीर्थे कृतं पापं गङ्गायां च विनश्यति। गङ्गायां यत्कृतं पापं तत्कुत्राऽपि न शाम्यति॥
तस्मात्पापं न कर्तव्यं गङ्गायां शास्त्रकोविदैः। कर्मणा मनसा वाचा कर्तव्यो धर्मसङ्ग्रहः॥

पुण्यतोया भगवती गंगाके निकट जाकर विशेषरूपसे निम्नलिखित चौदह कार्य कभी न करने चाहिये—समीपमें शौच, गंगाजीमें आचमन (कुल्ला), बाल झाड़ना, निर्माल्य (भगवान्‌को चढ़ी हुई पूजा-सामग्री) डालना, मैल छुड़ाना, शरीर मलना, क्रीडा करना, दान लेना, रतिक्रिया, दूसरे तीर्थके प्रति अनुराग, दूसरे तीर्थकी महिमा गाना, कपड़ा धोना या छोड़ना, जल पीटना तथा तैरना। ××× **[ब्रह्माण्डपुराण]** भगवती गंगाके पावन जलमें स्नान करनेके पश्चात् धारण किये हुए वस्त्रोंको जलमें निचोड़ना नहीं चाहिये। विद्वान् व्यक्तिको चाहिये कि वह गंगाजलमें दन्तधावन न करे, यदि अज्ञानवश करता है तो उसे गंगास्नानका पुण्य प्राप्त नहीं होता। प्रातःकाल गंगास्नानसे पूर्व अन्य स्थानपर शौच-दन्तधावनादि नित्यकर्मोंसे निवृत्त होकर तथा रात्रिमें पहने हुए वस्त्रोंको परिवर्तितकर, पवित्र वस्त्र धारणकर ही गंगाजीमें स्नान करना चाहिये। जो मनुष्य दन्तधावनादि क्रियाओंको गंगाक्षेत्रसे दूर न करके गंगाक्षेत्रमें ही करता है, उसे गंगास्नानका सम्पूर्ण फल प्राप्त नहीं होता। गंगातटपर जो मनुष्य मल-मूत्र आदिका परित्याग करता है, उसका नरकोंसे करोड़ों कल्पोंमें भी उद्धार नहीं हो सकता। जो मनुष्य गंगाजीमें कफ अथवा थूक अथवा आँखका मल (कीचड़) अथवा किसी शारीरिक मल या अन्य किसी भी प्रकारके मलको छोड़ता है, वह निश्चय ही नरक प्राप्त करता है। जो मनुष्य गंगाजीमें उच्छिष्ट (जूठा, बचा हुआ या बासी) पदार्थों अथवा कफ आदि दैहिक मलोंका प्रक्षेप करता है, उसे ब्रह्महत्याका पाप लगता है और दीर्घकालपर्यन्त भयानक नरक-यातना भोगनी पड़ती है। जो मूर्ख मनुष्य अज्ञानवश गंगातटपर पापाचरण करता है, उसका वह पाप अक्षय हो जाता है तथा उस पापका क्षय किसी भी तीर्थमें नहीं हो सकता। दूसरे तीर्थोंमें किये गये पाप गंगाजीके प्रभावसे विनष्ट हो जाते हैं, किंतु गंगातटपर किये गये पापोंका परिशमन किसी भी तीर्थमें नहीं हो पाता, अतएव शास्त्रज्ञ मनुष्यको गंगाकी सन्निधिमें किये गये पापोंकी गुरुताको समझकर मन, वाणी अथवा कर्मसे कभी भी पापाचरण नहीं करना चाहिये, अपितु सर्वदा धर्माचरण ही करना चाहिये। **[पद्मपुराण क्रियायोगसारखण्ड]**